प्रकीर्णक-पुस्तकमाला ४३

वीरोंकी कहानियाँ।



अनुवादक—

कुँवर कन्हैयाजू।

प्रकीर्णक-पुस्तकमाला ४३

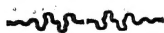
वीरोंकी कहानियाँ।

[एक अँगरेज़ी पुस्तकके आधारसे लिखित]



लेखक—

श्रीयुत कुँवर कन्हैयाजू।



प्रकाशक—

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई।

श्रावण, वि० सं १९८५।

जुलाई, १९२८।

तृतीयावृत्ति।] [मूल्य सात आने।

प्रकाशक—

नाथूराम प्रेमी, प्रोप्रायटर,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, पो० गिरगाँव-बम्बई।

प्रथमावृत्ति—सन् १९१६।

दूसरी आवृत्ति—सन् १९२८।

तीसरी आवृत्ति—सन् १९२८।

मुद्रक—

मंगेश नारायण कुलकर्णी,

कर्नाटक प्रेस,

३१८ ए, ठाकुरद्वार, बम्बई २.

कहानियोंकी सूची ।



वीरोंकी कहानियाँ।



बादशाहकी दुलहिन।



(१)

सिन्धके बादशाह अहमदशाहने रजत-सरोवरके किनारे एक शीत-महल बनवाया था। गर्मीके दिनोंमें राजधानी छोड़कर वह बहुधा यहीं रहा करता था। वह एक सुन्दर और सुदृढ़ शरीरका युवा पुरुष था। जिस प्रकार वह युद्ध-कुशल और साहसी था उसी प्रकार काव्य, कला-कौशल आदि सद्गुणोंका प्रेमी और सहायक भी था।

एक दिन वह अपने कुछ चुने हुए साथियोंके सहित एक सुन्दर किश्तीमें सवार होकर जलक्रीडा कर रहा था। स्वच्छ चाँदनी सरोवरके स्वच्छ जलको और भी स्वच्छ बना रही थी। हरे भरे वृक्षोंसे परिपूर्ण टापू—जिनके पास होकर वह किश्ती जा रही थी—बड़े ही सुहावने मालूम होते थे। मधुर संगीत कानोंमें अमृतकी वर्षा कर रहा था। किश्तीमें बैठे हुए मुसलमान कलावतोंने पहले बादशाहकी वीरता और उदारताके

गीत गाये और फिर बहिश्तकी हूर और परियोंका वर्णन करते हुए गुलाब और बुलबुलोंपर जाकर अपना गाना समाप्त किया। उनके बाद एक हिन्दू कविने उच्च स्वरसे एक राजपूतकुमारीकी प्रसंशाका गीत गाया। गीतका संक्षेप यह था कि वह राजकन्या मृग-शावकके समान भोलीभाली और मनोहारिणी है और सती सीताके समान अद्वितीय सुन्दरी, बुद्धिमती और लज्जाशीला है। गीतके प्रत्येक पदमें हृदयको हिला देनेवाली सरसता और मधुरिमा भरी हुई थी। उस सुमधुर शीतल चन्द्रकिरणोंकी छायामें निस्तब्ध भावसे श्रवण करते हुए बादशाहके हृदयपर इस गीतका गहरा प्रभाव पड़ा। उसने पूछा, "यह महताबरुख़ परी पैकर किसी ख़याली दुनियाकी चीज़ है, या दरअसल कहीं है?" कविने उत्तर दिया, "हुज़ूर, वह इस समय मौजूद है और कुमारी है। मैंने राजपूत सरदार पर्वतसिंहकी कन्या लालाकी प्रशंसामें यह गीत गाया है।" "अगर वह दरअसल तुम्हारे बयानके मुआफिक दिलफ़रेब है, तो उसे मैं अपनी दुलहिन बनाऊँगा, नहीं तो इस तारीफ़का इनाम यह होगा कि तुम्हारा सिर कलम किया जायगा।" यह कहकर बादशाह गहरे विचारोंमें डूब गया। थोड़ी ही देरमें किश्ती किनारेपर लगा दी गई।

दूसरे दिन सबेरे ही बादशाहने अपनी सभाके सलाहकार ब्राह्मणको बुलाया और उससे पर्वतसिंहकी लड़कीके विषयमें पूछताँछ की। ब्राह्मण देवताने और भी नमक मिर्च लगाकर लालाके सौन्दर्यका वर्णन कर दिया जिससे कविके संगीतपर मानों मोहर लग गई। लालाकी प्राप्तिका ध्यान, जो अभीतक अन्तरके निभृत कक्षमें छुपा हुआ था, अब बाहर आ गया। बादशाहने ब्राह्मणको आज्ञा दी कि, तुम इसी समय पर्वत-सिंहके यहाँ जाओ और कहो कि बादशाह तुम्हारी बेटीको अपनी दुलहिन बनाना चाहते हैं।

किन्तु बादशाह अपनी इच्छापूर्तिके मार्गको जितना निष्कण्टक और सुगम समझता था उतना वह वास्तवमें था नहीं। पर्वतसिंह उन राजपूतोंके समान नहीं था जिन्होंने अपनी कन्यायें बादशाहको या उसके सरदारोंको ब्याहकर अपना सौभाग्य समझा था। वह सच्चा राजपूत था। उसे अपने पूर्वजोंका अभिमान था और इस कारण वह अपने कुलकी मर्यादाको बनाये रखना अपना कर्त्तव्य समझता था। उसे राजपूतोंका मुसलमानोंके साथ विवाह-बन्धनमें बँधना बहुत ही खटकता था। वह इस कार्यसे बहुत घृणा करता था। अपने धर्मकी रक्षाके आगे शाही ताज और तख्तसे सत्कार पानेके लोभको वह तुच्छ समझता था।

पर्वतसिंह जैसा वीर था वैसा ही समझदार भी था। इस समय अपनी रक्षाका प्रबन्ध ठीक न होनेके कारण उसने बादशाहसे कहला भेजा कि मैं अपनी लड़कीको ब्याह देनेके लिए तैयार हूँ।

(२)

बादशाहने सुना कि पर्वतसिंह अहोरके पहाड़ी किलमें चला गया है और वहाँ गुप्तरूपसे तैयारियाँ कर रहा है। उसके स्वजनसम्बन्धी और भैमार राजपूत आ आकर उससे मिल रहे हैं। अहमदशाहने दश हजार सेना तैयार की और निश्चय किया कि या तो इस सेनासे राजपूतोंका सर्वनाश कर दूँगा या इसे ही बारात बनाकर नई दुलहिनको ले आऊँगा।

निदान अहमदशाह बड़ी शानके साथ अपनी वीर बारातको लिये हुए अहोरके किलेके पास जा पहुँचा। वह एक बहुमूल्य साजोंसे सजे हुए हाथीपर बैठा था। शाहने ज्यों ही किलेके भीतर जानेके लिए अपने हाथीको बढ़ाया त्यों ही एक बाण किलेसे सनसनाता हुआ आया और

उसके ताजकी कलगीमें आ लगा। बाण थोथा था और उसके सिरेपर एक कागजका पुरजा बँधा हुआ था जिसमें यह लिखा था–"जिस धनुर्धरके हस्तकौशलने इस बाणको तुम्हारे ताज तक पहुँचाया है वह तुम्हारे उस कुत्सित मस्तकको बातकी बातमें छेद सकता है जिसमें लालाको लेनेकी लालसा उत्पन्न हुई है। अब भी सचेत हो जाओ।" इसी समय किसीने वह बहुमूल्य पोशाक–जो बादशाहके यहाँसे नई दुलहिनके लिए आई थी–चिथड़े चिथड़े करके बादशाहके हाथीके आगे फेंक दी। गरज यह कि तुमुल युद्धकी सूचना हो गई। मुसलमान सेनाने समझा कि अब शीघ्र ही किलेसे आग बरसेगी और हमारी रक्षा होना कठिन है; परन्तु यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ कि वहाँ बहुत देर तक खड़े रहनेपर भी कहींसे एक भी बाण न आया और न कोई बन्दूककी आवाज़ ही सुनाई दी।

अहोरके किलेमें तीन हजार राजपूत थे। बादशाहके खजानेसे जो कुछ धन रत्न आदि सौगातके तौरपर पर्वतसिंहको मिला था, वह सब उसने किलेकी दुरुस्ती, रसदके इन्तजाम और अच्छे अच्छे हथियारोंके ख़रीदनेमें ख़र्च किया था। उसकी प्रतिज्ञा थी कि चाहे जो हो, अपनी लालाको विधर्मीके हाथ न जाने दूँगा और अन्त तक इस किलेकी सहायतासे अपनी रक्षा करूँगा।

(३)

मुसलमान लोग नसैनियाँ लगा लगाकर किलेकी दीवारोंपर चढ़ने लगे। चढ़ते समय जब उनके काममें कोई रुकावट न डाली गई, तब तो उनका हौसला बढ़ गया; परन्तु थोड़ी ही देरमें उन्हें विश्वास हो गया कि किलेके भीतर प्रवेश करना ज़रा टेढ़ी खीर है। राजपूत लोग

ऊपर ताक लगाये हुए खड़े थे; उन्होंने बड़े बड़े लट्ठोंसे सारी नसैनियोंको खिसका दिया जिससे नसैनियोंपर चढ़े हुए मुसलमान लुढ़क लुढ़ककर खाईमें जा गिरे। किलेमें पैठनेके लिए अनेक यत्न करनेपर भी जब मुसलमानोंको सफलता न हुई, तब उन्होंने स्थायी घेरा डाल देनेका निश्चय कर लिया। इसके सिवाय पर्वतसिंहको ठिकाने लानेका और कोई उपाय भी न था।

धीरे धीरे तीन महीने बीत गये। राजपूतोंको रसदकी कमी माल्रम होने लगी। बाहरसे किसी प्रकारकी सहायता पानेकी भी आशा न थी। अब पर्वतसिंहको चिन्ताने सताया। उसने अपने साथियों समेत दृढ प्रण किया था कि मर मिटना पर आत्मसमर्पण न करना। राजपूतोंको अपने प्राण देना कोई कठिन काम न था; पर उन्हें चिन्ता यह थी कि हमारे पीछे हमारी स्त्रियों और बेटियोंकी क्या दुर्दशा होगी।

और कोई उपाय न देखकर उन्होंने अपने चिर-प्रचलित जौहर व्रतकी उद्यापना करनेका ही निश्चय किया। सारी स्त्रियाँ प्रसन्नतापूर्वक अग्निमें जल जानेके लिए तैयार हो गईं। कई स्त्रियोंने यह इच्छा की कि हम अपने पति—पिता—पुत्रोंके साथ हथियार बाँधकर लड़ें और उनकी यथासाध्य रक्षा करें; परन्तु पर्वतसिंहकी स्त्रीने जो सबकी शिरोमणि थी, उन्हें ऐसा करनेसे रोका और कहा—नहीं, यह मार्ग स्त्रियोंके लिए निरापद नहीं है। चलो, हम सब चिताका आलिङ्गन करें और अपने पति-पुत्रोंके पहुँचनेके पहले ही स्वर्गमें जा पहुँचे।

रातको एक बड़ी भारी चिता तैयार की गई। ढेरकी ढेर लकड़ियाँ एकत्र करके उनमें मनों घी और राल डाल दी गई। इसके बाद उसमें आग लगाई गई जो देखते देखते आसमानसे बातें करने लगी। राजपूत

वीराङ्गनायें एक एक करके उसमें कूदने लगीं और सबेरा होते होते उस किलेमें एक भी स्त्री जीती न बची !

(४)

स्त्रियोंकी ओरसे निश्चिन्त होकर अब राजपूत-वीरोंने अपने बलिदानकी तैयारी की । सबेरा होनेके पहले ही तीन हज़ार राजपूत केसरिया वस्त्र पहने हुए किलेके भीतरी फाटकपर एकत्रित हो गये । वहाँ उन्होंने एक दूसरेके गले लगकर हमेशाके लिए बिदा माँग ली और किलेका फाटक खोल दिया । इस वीर अभिनयके प्रधान नायक पर्वतसिंह और उसके युवराज कुमार रामसिंहके पीछे पीछे सारे राजपूत एक तन एक मन होकर शत्रुदलपर इस प्रकारसे टूट पड़े जैसे भेड़ोंके झुंडपर भूखा भेड़िया टूटता है ।

मुसलमान-सेनाने अपने बचावके लिए खाई खोद रक्खी थी और उसीकी मिट्टीके धूलि-कोट बना रक्खे थे । राजपूत दल कोटरक्षकोंको मारता-काटता हुआ सारी रुकावटोंको पार करके शत्रुओंके मध्यमें जा धँसा । पास ही बादशाहका खेमा था जिसपर नीला निशान फहरा रहा था । राजपूत यवन-सेनाको चीरते हुए शाही-खेमेकी ओर बढ़ने लगे । मुसलमानोंने उनको रोकनेकी बहुत चेष्टा की; परन्तु वह निष्फल हुई । उनके भयंकर वेगको रोकना असंभव हो गया । बादशाह आपत्तिको बिलकुल समीप आई देखकर उठ खड़ा हुआ और शीघ्र हथियार बाँधकर हाथीपर सवार हो गया । जो मुसलमान सिपाही राजपूतोंके असह्य आक्रमणसे घबड़ाकर तितर बितर हो गये थे उन्हें एकत्र करके वह मुकाबिलेके लिए तैयार हो गया । राजपूतोंका हमला अचानक हुआ था, इस कारण मुसलमान दलमें खलबली मच गई थी । जबतक मुसलमान सिपाही तैयार होकर मोरचेबन्दीपर हुए तब तक राजपूत

इतने बढ़ गये कि बादशाहके प्राण सूख गये। उसे घड़ी घड़ीपर यही भास होता था कि अब मरा या पकड़ा गया। उसके सैनिक सिमटकर हाथीके सामने हो गये और एक एक करके मारे गये। राजपूत प्राण-पणसे आगे बढ़ रहे थे, इसलिए वे थोड़े ही समयमें बादशाहके हाथीके सामने आ पहुँचे। उनके बाणों और बरछोंसे हाथीकी पीठ चलनी बन चुकी थी और वह पलायनोन्मुख हो रहा था कि पर्वतसिंहके साहसी पुत्र रामसिंहने नीचे पैठकर हाथीके तंगकी रस्सी अपनी कटारसे काट दी। रस्सीके कटते ही हौदा ओंधा हो गया और बादशाह जमीन सूँघने लगा। इसी समय रामसिंह अपने दो तीन साथियों सहित उसपर झपटा; परंतु उसका वार खाली गया; क्योंकि अहमदशाह तब तक सँभल गया था—उसने उस वारको अपनी ढालपर झेल लिया। इधर उसकी रक्षाके लिए मुसलमान सिपाही भी चारों ओरसे सिमट आये थे। लड़ाई धीरे धीरे भयंकररूप धारण करने लगी। राजपूतोंकी संख्या कम होने लगी और शत्रुओंकी बढ़ने लगी। राजपूत चारों ओरसे घेर लिये गये और उनपर प्रबल हमले होने लगे। राजपूतोंको अब जीतकी आशा न रही। जितने शत्रु मारे जा सकें उतने मार लो; बस अब यही उनका उपस्थित कर्तव्य हो गया। उनका एक एक दल छूटता था और शत्रुसेनामें घुसता हुआ मारता काटता हुआ अन्तमें शान्त हो जाता था।

वीर पर्वतसिंहके मस्तकपर अब भी राजचिह्न शोभा दे रहे थे और वह अब भी अपने साथियोंको घमासान युद्धके लिए उत्तेजित करता हुआ शत्रुओंकी संख्या कम कर रहा था। मुसलमान उसे मारने या जीता पकड़ लेनेके लिए जी-जानसे चेष्टा कर रहे थे; परंतु उन्हें सफलता न होती थी। जब तलवारोंने काम न दिया, तब एक बाण छोड़ा गया और उसने पर्वतसिंहके विशाल शरीरको धराशायी कर दिया। पिताके

गिरते ही पुत्रने मुकुट, छत्र आदि राजचिह्न धारण कर लिये। यह देख बरलीखाँ नामका मुसलमान सरदार उसके मुकाबिलेपर आ पहुँचा। बरलीखाँके एक कठिन प्रहारसे रामसिंहकी तलवार टूट गई, तो भी वह लड़ता रहा और उसी टूटी तलवारसे लड़ते हुए बरलीखाँके तीन साथियोंको मारकर उसने वीरगति प्राप्त की।

मुट्ठीभर राजपूत आखिर कहाँतक लड़ सकते थे? उन सबने अपनी मर्यादाकी रक्षाके लिए एक एक करके प्राण दे दिये। युद्धका अन्त हो गया। आकाशमें उड़ती हुई धूलि चिरनिद्रामें सोते हुए सात आठ हजार शवोंपर बैठकर शान्त हुई।

निर्दय बादशाहने बड़ी उत्सुकतासे अहोरके किलेके भीतर प्रवेश किया; परन्तु उसने वहाँ क्या देखा? निर्जन स्मशान! शवदाहकी दुर्गन्धिसे वायुमण्डल व्याप्त हो रहा था और चितामें अब भी अग्नि दहक रही थी। राजपूतोंके जौहरव्रतका वर्णन उसने पहले कई बार सुना था, इसलिए उसे यह समझनेमें विलम्ब न लगा कि यहाँ भी उसी व्रतका उद्यापन किया गया है। इससे उसे बड़ी निराशा हुई। उसका पाषाण-हृदय भी इस नारी-हत्यासे द्रवित हो गया। कुछ समयके लिए उसे ऐसा मालूम हुआ कि मैंने यह कार्य अच्छा नहीं किया। वह मन-ही-मन कहता था—

"न खुदा ही मिला न विसाले सनम,
न इधरके हुए न उधरके हुए।"

(५)

परन्तु उसकी यह निराशा शीघ्र ही आशामें परिणत हो गई। थोड़े ही दिनोंमें उसके पास यह संदेश आया कि "लाला अभी जीती है।

उसे पर्वतसिंहने अपने पड़ौसके एक जागीरदार राजपूतके यहाँ भेज दिया था, इसलिए उसकी रक्षा हो गई है। लाला स्वयं बादशाहपर मुग्ध है और वह उसके साथ शादी करनेके लिए तैयार है!" अहमदशाहके आनन्दकी सीमा न रही। आकाशका चाँद उसने पृथ्वीपर ही पा लिया।

रजत-सरोवरके किनारेके महलमें ही इस विवाहका होना निश्चित हुआ। यह विवाह राजनीतिकी दृष्टिसे बड़े महत्त्वका था। क्योंकि इसमें लाला और बादशाहके बीच ही नहीं; किन्तु हिन्दू और मुसलमानोंके बीच भी स्नेहका सम्बन्ध होना था। दरबारकी ओरसे घोषणा कर दी गई कि जो राजपूत पहले विरुद्ध रहे हों, या अब भी विरोधी हों, उन सबको विवाहमें सम्मिलित होना चाहिए, उनके सब अपराध क्षमा कर दिये गये। यह भी प्रकट कर दिया कि विवाह हिन्दू-विवाहपद्धतिके अनुसार होगा।

दूर दूर तकके लोग इस अभिनव विवाहोत्सवमें आकर सम्मिलित हुए। जहाँ तहाँ मूर्तिमान् आनन्द दृष्टिगोचर होने लगा।

आज एक सुन्दर विवाह-मंडपके भीतर हम लाला और अहमदशाहको पास पास बैठे देखते हैं। दोनोंका गँठजोड़ा हो रहा है। दोनों ही विवाहके बहुमूल्य आभूषणोंसे सजे हुए हैं। लाला अपने चन्द्रविनिन्दित मुखको चटकीली चूनरीसे ढके हुए निश्चिन्त भावसे बैठी है। उसकी ओर लोगोंकी तरह तरहकी दृष्टियाँ पड़ रही हैं। कोई दृष्टि कौतुकयुत है, कोई आनन्दपूर्ण है, कोई विषादमय है और कोई घोर घृणायुक्त है। इस समय अहमदशाहने वह पोशाक पहिन रक्खी थी जो लालाकी ओरसे उसे प्राप्त हुई थी और जो बिलकुल देशी ढँगकी थी। पक्के मुसलमान उसके इस कार्यपर घृणाकी वर्षा कर रहे थे; परन्तु उस ओर उसका जरा भी लक्ष्य न था।

विवाह-विधिको समाप्त करके पुरोहितजीने ज्यों ही आशीर्वाद दिया, त्यों ही लाला अपने स्थानसे उठी और अपने पतिका हाथ पकड़कर उसे बरामदेके ऊपरके उस छज्जेपर लिवा ले गई जो सरोवरके ठीक किनारे-पर था और जहाँसे दूर दूर तककी प्रकृतिकी शोभा दिखलाई देती थी। उसने कहा—" मालिक मेरे, आइए यहाँ धूपमें खड़े होकर हम अपनी प्रजाको दर्शन देवें जो इसी लालसासे न जाने कबकी खड़ी है।" बाद-शाहने अपनी दुलहिनकी आज्ञाका तत्काल ही पालन किया। उसने देखा कि चारों ओर, दूर दूर तक, लोगोंका जमाव हो रहा है और वे सब टकटकी लगाकर हमारी ही ओर देख रहे हैं। मनुष्यसमूहसे आगे जहाँ तक उसकी नजर जाती थी कोई मैदान, घाटी, पर्वत आदि ऐसा स्थान न था जो उसकी शासन-सीमासे बाहर हो। इन सब बातोंके साथ ही उसने यह भी देखा कि जिस लालाके लिए बड़े बड़े कष्ट सहे, हज़ारों मनुष्योंका रक्त बहाया, वह आज दुलहिन बनकर बगलमें खड़ी है। इस समय उसका चेहरा आत्माभिमानकी दीप्तिसे दमक उठा।

अब बादशाहने अपनी दृष्टिको सब तरफसे हटाकर अपनी दुलहि-नकी ओर डाला। उसे आश्चर्य हुआ कि साधारण दुलहिनें जिस संको-चकी दृष्टिसे अपने पतियोंकी ओर देखती हैं, उस संकोचका लालाकी दृष्टिमें सर्वथा अभाव है। वह एक अनोखे ढँगसे शाहकी ओर देखती हुई व्यंग्यपूर्वक बोली—" मालिक मेरे, इस उपस्थित आनन्दको भोग लीजिए, नहीं तो यह घड़ी जाती है। सांसारिक सुखोंकी सर्वोच्च सीमा-पर पहुँचना ही मानो ईश्वरीय दण्डका पात्र होना है। हम लोग जो इस समय सब तरहसे सुखी और स्वस्थ हैं, आश्चर्य नहीं जो एक दिनभरमें —नहीं नहीं—घड़ी भरमें ही इस संसारसे उठ जाँय।" अहमदशाह नई दुलहिनकी प्राप्तिके आनन्दमें ऐसा मस्त हो रहा था कि उसने

लालाके इन व्यंग्यपूर्ण वाक्योंको ज़रा भी न समझा। वह मुस्कराता हुआ बोला— "ऐसा क्यों?"

नीचे सरोवरके किनारे खड़े हुए सर्वसाधारणजन और पास ही बरामदेमें खड़े हुए मुसाहब लोग इस अभिनव जोड़ेकी छबि निहार रहे थे। उनकी रत्नजटित-पोशाकपर पड़ती हुई सूर्यकी किरणें एक अपूर्व शोभाको जन्म दे रहीं थीं। सबके देखते देखते बादशाहके चेहरेपर घबड़ाहट नजर आने लगी। धूपके कारण ज्यों ही उसके शरीरसे पसीना निकला, त्यों ही वस्त्रोंमें लगे हुए तीव्र विषने अपना असर डालना शुरू कर दिया। वह विकल होकर इधर उधर दौड़ने लगा और पोशाकको फाड़फाड़कर फेंकनेका यत्न करने लगा। वह चिल्लाना चाहता था; परन्तु उसके कण्ठमेंसे आवाज़ न निकलती थी। अन्तमें उसका शरीर शिथिल हो गया और जब तक लोगोंने उसकी इस दशाका कारण मालूम किया, तब तक वह इस संसारसे ही बिदा हो गया!

लालाने अहमदशाहके निर्जीव शरीरको एक बार घृणाकी दृष्टिसे देखा, फिर राजमहलके सबसे ऊँचे शिखरपर चढ़कर उसने अपने पिताके प्यारे अहोर किलेकी ओर देखा, और इसके बाद माता–पिता–भाई–बन्धुओंकी मृत्युका ध्यान किया। अन्तमें उसके मुखमण्डलपर एक विकट हास्यकी छाया दीख पड़ी और उसने वहींसे सरोवरमें कूदकर प्राण दे दिये!



विलुप्त मंजूषा।



महाराज शिवाजी सूरत नगरको लूटकर और लूटके सामानको गाड़ियोंमें भरकर, अपने साथियों सहित रायगढ़ दुर्गकी ओर जा रहे हैं। हम सब इंग्लिश फेक्टरीके लोगोंने बड़े यत्नसे अपने धन और प्राणोंकी रक्षा की। हम प्रेसीडेंट सर जॉर्ज ऑक्सडनको—जिन्होंने स्वैलीके जहाजोंपरसे सैनिकों और सरदारोंको बुलाकर इस महान् संकटके समयमें हम लोगोंकी रक्षा की—धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते हैं। हमारी फैक्टरीके कई आदमी मारे गये और बहुतेरा सामान भी लुटेरोंके हाथ लगा। बचे हुए लोगोंमें मेरा एक चाचा भी था जो कि अपनी मंजूषा खो जानेके दुःखसे बहुत दुखी हो रहा था। उस मंजूषाको वह अपने प्राणोंसे भी अधिक मूल्यवान् और प्रिय समझता था। क्योंकि उस मंजूषामें उसकी मृत प्रियपत्नीकी एक जड़ाऊ मोहर रक्खी हुई थी। उस मोहरमें सच्चे हीरे और माणिक जड़े हुए थे। इस मोहरके सिवा एक अगोसनी डाई (ईसाका प्राणदण्डके समयका चित्र) भी रक्खी थी, जो उसे राजा मारटरने राजसेवाके पुरस्कारमें अपने हाथोंसे भेट दी थी। इस मंजूषाके सिवा और भी कई बहुमूल्य पदार्थ जो वह भागते समय अपनी कोठरीमें छोड़ आया था लुटेरोंके हाथ लगे थे। परन्तु उसे उनके जानेका कुछ भी रंज न था। शान्ति होनेपर जब हमने अपनी कोठरियोंको जाकर देखा तो ऊँची ऊँची दीवारोंके सिवा उनमें और कुछ भी शेष न था। बहुत खोज की, पर मंजूषाका पता न चला। अब इसमें कुछ भी संशय न रहा कि वह शिवाजीकी

लूटके साथ रायगढ़के किलेमें जा पहुँची है। उसे वहाँसे वापिस लाकर मैं अपने चाचाका दुःखमोचन कर सकूँगा, इसकी मुझे कोई आशा न रही।

(२)

प्रथम चार्ल्सके समय इँग्लैंडमें राजविद्रोहकी अग्नि धधक उठी थी। उस समय मेरा चाचा राजपक्षपर दृढ़ था। अस्तु, जब विद्रोहियोंका जोर हुआ तब वह अपनी पैतृक सम्पत्तिसे वंचित कर दिया गया। जो थोड़ा बहुत रुपया उसके पास लूटसे बचा था उसे लेकर वह हॉलैण्ड चला आया और वहाँ उसने व्यापार करना शुरू कर दिया। इस व्यापारमें उसे ऐसा लाभ हुआ कि वह थोड़े ही दिनोंमें बहुत मालदार हो गया। मैं उसके भाईका एकमात्र अनाथ बालक था। मेरा पिता नैसवेकी लड़ाईमें मारा गया था, तबसे मैं अपने चाचाहीके पास रहता था। मेरा चाचा व्यापारके लिए बहुधा हिन्दुस्थान भी आया करता था। जब मेरी उम्र कुछ बड़ी हुई तब वह मुझे भी अपने साथ हिन्दुस्थानको ले आने लगा। यद्यपि मेरा चाचा मेरे कामकाजसे मुझपर बहुत प्रसन्न रहता था, पर मेरी स्वाभाविक प्रवृत्ति व्यापारकी ओर न थी। इससे मुझे इस काममें आनंद न आता था। जिस समय हम अहमदाबाद, भरोंच, खंभात आदि स्थानोंमें व्यापारके लिए आते जाते थे उस समय सूरत और उसके आसपासके शहरोंमें अक्सर मराठोंके आक्रमण हुआ करते थे। मेरे बापदादे वंश-परम्परासे सैनिक काम करते थे। मेरी रगोंमें भी वही खून भरा था। इस समय सूरत फैक्टरीकी लुटेरोंके हाथसे रक्षा करते समय मेरी उक्त वीरवृत्ति और भी उत्तेजित हो उठी।

इधर बहुत दिनोंसे व्यापारी कामोंमें लगे रहने और हिसाब किताब लिखते लिखते मेरा जी ऊब गया था; इसलिए मैंने सोचा कि मराठोंके

मुल्कमें दौरा करके उस विलुप्त मंजूषाके प्राप्त करनेकी चेष्टा क्यों न करूँ? उस मंजूषाका माल कुछ बहुत कीमती न था, यदि मेरे चाचा उसको भूल जाते या उसके बदलेमें बहुतसा द्रव्य पाकर संतुष्ट हो जाते, तो मैं उसके बदलेमें उन्हें बहुतसा रुपया दे सकता था। पर चाचा एक घड़ी भरके लिए भी उसे न भूलते थे। मैं यह जानता था कि वीरवर शिवाजीके पाससे मंजूषा लौटानेकी चेष्टा करना केवल विपज्जनक ही नहीं वरन् जानकी जोखिमका भी काम है। पर कई महीनोंसे व्यापारिक दफ्तरमें बन्द रहनेके कारण सुस्ती और उदासीनता बे-हद बढ़ गई थी, इससे नये प्रदेशोंकी ताजी हवा खानेके लिए मेरा मन तड़फने लगा। इसके सिवा एक बात और भी मुझे इस ओर उत्तेजित करने लगी। इँग्लैंडसे आनेके पहले मैं उस मोहरमें अङ्कित महिलाकी बेटीपर—अपने चचाकी लड़कीपर—तनमनसे आसक्त हो चुका था। यद्यपि निर्धन और पराश्रित होनेके कारण मैं अपनी उस इच्छाको प्रकट न कर सका था, परन्तु हिन्दुस्थानको रवाना होते समय मुझे उसके कर-कमलोंसे जो एक गुलाबपुष्प प्रेमोपहारमें मिला था—वही मेरी आशाका एकमात्र सहारा था। अतः मैंने सोचा कि अपनी इस आन्तरिक इच्छाको पूर्ण करनेके लिए चाचाको प्रसन्न करनेका इससे अच्छा दूसरा और कोई उपाय नहीं है। यदि मैं उस खोई हुई मंजूषाको ला दूँगा, जिसके लिए कि वह मर रहा है—जिसमें उसकी प्राणप्रिया मृत पत्नीकी प्रतिमूर्ति अंकित है, तो वह मेरा बड़ा उपकार मानेगा और उससे मेरी आन्तरिक इच्छा भी पूर्ण हो सकेगी। इस तरह बहुत कुछ सोच विचार कर मैंने वहाँ जानेका पक्का निश्चय कर लिया।

चचाको अपने इस विचारकी सूचना देना मुझे पसन्द न था। मुझे पूर्ण विश्वास था कि वे मेरे इस कार्यमें कभी सम्मत न होंगे। अस्तु, मैंने

छुपे छुपे सब प्रबंध ठीक कर लिया और गोपाल नामके एक नौकरको भी साथ ले चलनेके लिए तैयार कर लिया। गोपाल मेरा विश्वस्त और बहादुर नौकर था। अपनी अपनी पिस्तोलें और तलवारें लेकर हम दोनों रवाना हो गये। हम दोनों ही पहाड़ी घोड़ोंपर सवार थे। ये घोड़े यद्यपि देखनेमें सुन्दर न थे; परन्तु चलनेमें बहुत तेज और पहाड़ी मार्गके लिए उपयुक्त थे। जिन पहाड़ी मार्गोंमें अँगरेजी चार्जर और रंटर नस्लके घोड़ोंके पैर नहीं उठते, वहाँ ये दौड़ते हुए जाते थे।

इस यात्रामें जो प्राकृतिक सौन्दर्य्य हमारी दृष्टिमें आया उसे हम आजन्म नहीं भूल सकते। जनवरीका महीना था। तीन महीनेकी धूप खा चुकनेसे पृथ्वी खूब सूखी और निष्पंक हो गई थी। रातको ओस पड़नेके कारण प्रातःकाल धरती सिंच जाती थी। रात्रिके समय चन्द्रमाकी सुधामयी चाँदनी चारों ओर फैलकर वन, शैल और मैदानोंको आनंद-प्लावित कर देती थी। मैं अपनी कल्पित आशाओं और उमंगोंके जोशमें रात रातभर मार्ग चला करता था। चन्द्रदेवकी शीतल चाँदनीमें जब जब मेरी मनकी उमंगें उत्तेजित हो उठती थीं तब तब मैं अपने आप तान अलापा करता था। इस तरह हमारा मार्ग तय होने लगा। जब हम सूरतसे ३० मील दूर निकल आये, तब हमने एक व्यक्तिके द्वारा अपनी यात्राका संदेशा चाचाके पास भेज दिया। यदि मैं संदेशा न भेजता तो संभव है कि वे मुझे खोया हुआ जानकर दुखी होते और मेरी खोजमें व्यर्थ परिश्रम करते।

मार्गमें जब जब डाकू लोग हमें सताते थे, तब तब हम दोनों पिस्तोलें लेकर अपनी रक्षाके लिए उद्यत हो जाते थे। डाकू भी हमारे पास विशेष सामान न देखकर व्यर्थ जानको जोखिममें डालना उचित

न समझते थे। जब तक चाँदनी रहती थी हम बराबर मार्ग चला करते थे और चाँदनी अस्त हो जानेपर किसी वृक्षके नीचे पड़ रहते थे। मराठे लुटेरोंका जोर शोर होनेपर भी यह प्रदेश उजाड़ नहीं था–सारा मुल्क खूब हरा भरा और गुलज़ार था। महाराजा शिवाजीकी ओरसे गरीब प्रजाको लूटने या सतानेकी सख्त मनाई थी। हम लोगोंको कभी कभी तो बस्तियोंमें भोजन मिल जाता था और कभी कभी जंगली फल मूल खाकर ही दिन बिताना पड़ता था। मार्गमें इतनी तकलीफें होनेपर भी शिवाजीके पास पहुँचानेवाला मार्ग हमें सुखदायक ही प्रतीत होता था। पश्चिमी घाटके पर्वतोंका दृश्य हमें बहुत ही भला लगता था।

सूरतकी लूटसे लदी हुई जो बैलगाड़ियाँ रायगढ़को जा रही थीं उनको हमने महर ग्रामके पास जाकर मिला पाया। एक हवालदारकी अधीनतामें कोई २५–३० सवार उनकी रक्षा करनेके लिए साथ जा रहे थे। उन्होंने हमें देखते ही घेर लिया और तब हम भी अपनी रक्षाके लिए पिस्तोल तानकर मुस्तैद हो गये। उन मराठा सवारोंका झुण्ड बहुत ही भला मालूम होता था। उनमेंसे प्रत्येक ढाल तलवार बाँधे और हाथमें भाला लिये हुए था। उनके बदनपर मोटे रुईदार चोगे थे जिन-पर अच्छी तलवार भी मुश्किलसे काम दे सकती थी। उनकी मोटी मोटी मूछें उनके चेहरोंकी वीर छटाको और भी उत्तेजित कर रही थीं। हवालदारने ज़ोरके साथ हथियार रख देनेके लिए हम लोगोंको आज्ञा दी; परन्तु हमने अस्वीकार करके पूछा–"यदि हम हथियार रख दें तो आप हमारे साथ कैसा व्यवहार करेंगे?" हवालदारने उत्तर दिया—"तुम लोग महाराजके सम्मुख पेश किये जाओगे।" मैंने कहा–"मुझे स्वीकार है; परन्तु जब तक हम राजद्वार तक न पहुँच जायँ

तब तक हम लोगोंके हथियार न छीने जायँ।" हवालदारने कुछ सोच विचार कर मेरी बात मान ली। मैं और मेरा सहचर गोपाल दोनों उन लोगोंके साथ चलने लगे। उन लोगोंने भी हमारे साथ मित्रताका व्यवहार किया।

कुछ दूरकी कठिन चढ़ाईके बाद हम लोग रायगढ़के फाटकपर जा पहुँचे। यहाँ पहुँचते ही पहले कहे अनुसार हमारे हथियार ले लिये गये। किलेके भीतर प्रवेश करते ही हमें एक तरहकी दृढ़तासी बँध गई—हथियार पास न रहनेपर भी किसीका भय न रहा। रही केवल शिवाजीकी बात, सो यह उनकी इच्छापर निर्भर था; यदि वे हमको कैद करना या मारना चाहते तो हमारे हथियार भी क्या करते? पहाड़की चोटीपर पहुँचनेके लिए केवल एक तंग मार्ग था—इसी मार्गसे हम जा रहे थे। सामने विशाल दुर्ग दिखाई दे रहा था। उसे देखते ही मुझे निश्चय हो गया कि यदि रसदकी तंगी न पड़े या कोई भेदिया उसका भेद प्रकट न करे, तो इस किलेका तोड़ना कठिन ही नहीं वरन् नितान्त असंभव है।

तीसरा और अन्तिम दरवाजा लाँघनेके बाद हम लोग किलेके अफसरके सामने उपस्थित किये गये। उसने हमारा उद्देश्य पूछ कर हमारे रहनेका प्रबन्ध कर दिया और एक दो दिनमें अवसर मिलते ही महाराजसे भेट करा देनेका वचन भी दिया। हम लोग भोजन-पानसे निवृत्त होकर उस विशाल किलेमें घूमने लगे। इस किलेमें दो हज़ार सैनिक रहते थे। फौजके अतिरिक्त किलेके भीतर अन्य लोगोंकी संख्या एक हजारसे ऊपर होगी। इस जगह राजमहलके सिवा दूसरे लोगोंके लगभग दो तीनसौ घर भी थे। जिस मार्गसे हम लोग गये थे, उस

बाजूको छोड़कर शेष तीनों ओरसे बड़ी बड़ी ऊँची चट्टानें अपना सिर उठाये खड़ी थीं कि जिनके कारण प्रकोटकी कोई आवश्यकता न थी। इस चहलकदमीके समय एक ब्राह्मण मुसद्दी हमारे साथ था और हम जिस वस्तुको जिस भावसे देखते थे, उसे वह ध्यानमें रखता जाता था। वह जिस बातका वर्णन करता था उसमें अपने राजाकी धीरता, वीरता और बुद्धिमत्ताकी प्रशंसा अवश्य करता था।

मध्याह्नके पश्चात् उक्त ब्राह्मणने कहा कि मैं तुमको दूरसे महाराजके दर्शन करा सकता हूँ। हमको इस ओजस्वी पुरुषके दर्शनकी बड़ी लालसा थी। बहुत दिन पहलेसे हम महाराज शिवाजीकी उग्रताका वृत्तान्त सुन रहे थे—उनके हाथसे अफ़ज़लखाँके मारे जानेका और जावलीके एक दग़ाबाज़ हिन्दू राजा (चन्द्रराव मोरे) के सर्वनाशका समाचार भी हम सुन चुके थे। हमारे साथी मि० स्मिथ जो पहले मराठोंके बंदी होकर यहाँ आये थे, अपनी आँखों देखा हाल कहते थे कि महाराज शिवाजी स्वदेशद्रोही और प्रजाको सतानेवाले प्रतिपक्षियोंको ध्वंस करनेके लिए सदैव तत्पर रहते हैं। जब कोई ऐसा बंदी उनके सामने उपस्थित किया जाता है तब राजाज्ञासे उसका सिर उड़ा दिया जाता है। दंड देनेवाले अपने हाथमें नंगी तलवारें लिये हुए राजाके इशारेपर खून बहानेको तैयार रहते हैं। उस समयके दृश्यकी कल्पना करके मेरा हृदय थर्रा गया। किन्तु जब उक्त ब्राह्मणने हमको इशारेसे महाराजके दर्शन कराये, तब महाराजकी सौम्य और भव्य मूर्तिको देखकर मेरी उक्त कल्पना बिलकुल निर्मूलसी प्रतीत होने लगी।

मैंने देखा कि महाराज एक चट्टानपर सहज भावसे बैठे हुए हैं। उनके पास शरीररक्षक या पहरेदार आदि कोई भी न था। पास ही एक कुएपर स्त्रियाँ पानी भरनेके लिए आ जा रही थीं। महाराज उनसे

वार्तालाप करते थे और उनके सुख दुःखकी बातें पूछते थे। छोटे छोटे बच्चे जो अपनी माताओंके साथ कुएपर हँसते खेलते जाते थे, महाराज उन्हें स्नेहपूर्वक बुलाकर उनके हाथोंमें फल फूल और मिठाईके दौने देते थे। उनके सामने फल फूल और मिठाईसे भरी हुई कई टोकरियाँ रक्खी थीं। इस मंगलमूर्तिके दर्शन करते ही मेरा मन आनन्दसे पुलकित हो गया। वे स्वजाति, स्वदेश और स्वधर्मके शत्रुओंके लिए भले ही काल-स्वरूप हों और हमारी समझमें राजाओंको ऐसा होना भी चाहिए; परन्तु प्रजावर्गके लिए तो पिता तुल्य थे। शत्रुओंपर उनका जैसा आतङ्क जमा था, प्रजापर वैसा ही, बल्कि उससे भी अधिक प्रेमभाव था। हम जितने दिन वहाँ रहे हमें महाराज शिवाजीकी साधुता और सुजनताके अनेक दृष्टान्त मिले। वे प्रत्येक प्रजाजन, कर्मचारी और यहाँतक कि 'मावली' और 'हेतकरी' के साथ भी प्रेम और सहज स्वभावसे बातचीत करते थे। उनके प्रत्येक वाक्य और शब्दसे जातिहितैषिता, स्वदेशप्रेम और धर्मभाव झलकता था। महाराज शिवाजी वास्तवमें हिन्दू और हिन्दुस्थानके सच्चे रक्षक थे।

महाराज शिवाजीका दरबार भरा हुआ है। सूरतसे जो माल लूटमें आया है उसकी आज प्रदर्शनी है। सब माल बहुत खूबरतीके साथ सजाकर रक्खा गया है। एक ईरानी गलीचेपर बहुमूल्य जवाहरात सजा कर रक्खे गये हैं। इन जवाहरातोंमें मोतियोंकी मालायें, बड़े बड़े हीरे, माणिक, नीलम, पुखराज आदि रत्न थे। तरह तरहकी हज़ारों बहु-मूल्य चीजें रक्खी हुई थीं। और लोगोंके समान मैं भी इस प्रदर्शनीके देखनेके लिए गया और दूरसे देखने लगा। यह सूरतकी लूटके मालकी प्रदर्शनी है, यह सुनकर मैं बड़ी बारीकी और आशाभरी दृष्टिसे यहाँ वहाँ दृष्टि-संचालन करने लगा। मैंने देखा कि उसी सामानमें एक

जगह मेरे चाचाकी मंजूषा भी रक्खी हुई है। मैं बड़ी देर तक उसकी ओर देखता रहा, परंतु जिस तरह सिंहके पंजेमें फँसे हुए बछड़ेको देखकर गाय निराश होकर दूर खड़ी रहती है—उसके छुड़ानेका कुछ प्रयत्न नहीं कर सकती—वही दशा मेरी हुई ।

इन सब वस्तुओंके मध्यमें एक सुन्दर गलीचेपर महाराज शिवाजी विराजमान थे। उनके मस्तकपर लाल रँगकी पगड़ी बँधी हुई थी जिस-पर जड़ाऊ सिरपेंच शोभा दे रहा था। पहलेकी अपेक्षा आज मुझे बहुत पाससे महाराजके दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। महाराज राजपूतोंके समान दाढ़ी रखाये हुए थे। उनका शरीर मजबूत, सुडौल और ऊँचाईमें कुछ ठिंगना था। उनकी नासिका उठी हुई और नोक-पर सुग्गेकी तरह कुछ टेढ़ी थी। लम्बी लम्बी भुजायें उनके बलवान् और असियुद्धमें प्रवीण होनेकी सूचना दे रही थीं। नेत्रोंकी दीप्ति उनके अप्रतिहत प्रभावको प्रकट कर रही थी। शिवाजीके पीछे उनके प्रथम पेशवा मोरोपंत पिंगले और तानाजी मालुसरे खड़े थे। ये दोनों वीर पुरुष शिवाजीके अभिन्नहृदय सुहृद् और सच्चे सहायक थे। अफज़-लखाँके मारने और पूनामें शाइस्ताखाँको पराजित करनेके समय ये दोनों वीर महाराजके साथ उपस्थित थे। राजगद्दीके दाहिनें बायें दोनों ओर दो भालेदार खड़े हुए थे।

(४)

महाराज शिवाजीके दरबारमें रसाई पैदा करना कुछ सहज न था। महाराजसे प्राइवेट मुलाकत होना तो और भी कठिन था। मुझे उस ब्राह्मण मुसद्दीसे राजदरबारके सब नियम और रीति व्यवहार माळूम हो गये थे। उसने बतलाया था कि महाराजसे मिलनेके लिए पहले मंत्रीसे मिलना चाहिए और यथाशक्ति उनको भेट भी देना चाहिए। मैं बड़े

असमंजसमें पड़ा; मेरे पास ऐसा क्या था जिसे मैं उनको भेट देता। दो दिन तक इसी सोच विचारमें रहा। तीसरे दिन मेरी यह चिन्ता मिट गई; महाराजने मुझे स्वतः बुला भेजा। मैंने जाकर भक्तिभावसे महाराजको अभिवादन किया। उन्होंने अभिवादन स्वीकार करके मुझसे रायगढ़ आनेका कारण पूछा। मैंने कहा—"एक तो विशाल मुग़ल-साम्राज्यपर आतङ्क जमानेवाले, वीरशिरोमणि महाराजके दर्शनकी अभिलाषा मेरे हृदयमें बहुत दिनसे जागरित हो रही थी जो आज पूर्ण हो गई और दूसरे सूरतकी लूटमें मेरे चाचाकी एक मंजूषा श्रीमान्‌के राजकोशमें चली आई है, उसे वापस ले जानेकी भी मेरी इच्छा है। उस मंजूषामें यद्यपि कोई बहुमूल्य चीज नहीं है; पर मेरे चचाको वह प्राणोंसे भी प्रिय है, उसके विना वह सदैव व्याकुल रहा करते हैं। आशा है कि महाराज उसे लौटा देनेकी कृपा करेंगे।" महाराजने उत्तर दिया—"यदि तुम उसके मूल्यका द्रव्य राजकोशमें जमा कर दो, तो तुम्हारी प्रार्थना मंजूर कर ली जायगी।" मेरे पास यहाँ क्या था, जिसके बदलेमें मैं मंजूषा पा सकूँ? कुछ सोचकर मैंने शेक्सपियरकी कविताका एक चरण कह सुनाया, जिसका भावार्थ यह था कि, "बादशाही, मोहर अथवा ताजमें नहीं बसती है वरन् बादशाहोंके दिल ही बादशाह हुआ करते हैं।" परन्तु मेर उक्त कथनका महाराजपर कुछ प्रभाव न पड़ा। उन्होंने मुस्कराते हुए कहा—"सूरतकी लूट तो राज्यकी सम्पत्ति है, उसमेंसे एक पाई भी व्यय करना प्रजाको हानि पहुँचाना है—खासकर एक ऐसे व्यक्तिके लाभके लिए कि जिसकी जातिवालोंने हमारी फौजसे मुकाबला किया—हम प्रजाकी सम्पत्तिको कदापि नुकसान नहीं पहुँचा सकते हैं। हमारी इच्छा अँगरेजोंको हानि पहुँचानेकी न थी, इसके प्रमाणमें केवल इतना कहना बस होगा कि

हमने तुम्हारी फैक्टरीके कप्तान स्मिथको अदंड छोड़ दिया था।" महाराजकी बातोंसे स्पष्ट ज्ञात होता था कि उनकी इच्छा हमको दंड देने या नुकसान पहुँचानेकी न थी। इसके बाद मुझे तीन चार दिनके भीतर सूरत वापिस चले जानेकी आज्ञा मिल गई और मैं महाराजको अभिवादन करके वापिस लौट आया।

(५)

किले और किलेकी पहाड़ी स्थानोंमें टहलने और देखने भालनेकी मुझे आज्ञा मिल गई थी। मैं एक दिन संध्या समय पहाड़ीके एक ऐसे एकान्त स्थानमें जाकर बैठ गया, जहाँसे बहुत दूर दूरके स्थान दिखाई देते थे। इस स्थानपर बैठकर मैं तरह तरहकी चिन्तायें करने लगा। स्वदेश त्यागने, उस बालिकापर आसक्त होने, हिन्दुस्थानमें आने, व्यापार करने, मंजूषा खोने, मंजूषाका पता लगाकर चाचाको प्रसन्न करने, आदि एकके बाद एक भावनायें मेरे स्मृतिपटलपर अंकित होने लगीं। इन्हीं बातोंको सोचते सोचते समय अधिक बीत गया। मैं झट उठ बैठा और जानेको उद्यत हुआ। इस समय चारों ओर खूब अंधेरा फैल गया था। मैंने देखा कि एक मराठा सिपाही रास्तेके सामनेसे जा रहा है। वह थोड़ा ही दूर पहुँचा था कि अकस्मात् तीन आदमी पासकी झाड़ियोंसे निकलकर उसपर टूट पड़े। तीनों नंगी तलवारें लिये हुए थे। सिपाही झट अपनी तलवार निकालकर उनका मुकाबला करने लगा। वह अपने हस्तकौशलसे तीनोंके वारोंको व्यर्थ कर रहा था। इस आकस्मिक घटनाको देखकर पहले तो मैं कुछ चकित हुआ, पर शीघ्र ही उस सिपाहीकी सहायता करनेको उद्यत हो गया। मेरे पास और कोई हथियार तो था ही नहीं, बाँसकी एक मजबूत लाठी थी। उसीको घुमाकर मैंने पीछेसे एकके सिरपर इस जोरसे मारा कि वह जमीनपर जा गिरा। अपने विपक्षमें

एक और आदमीको आया देखकर शेष दो आदमियोंका साहस भी कम हो गया। अपने साथीको जमीनपर गिरते देख एक आदमी मेरे ऊपर टूट पड़ा। उसने अपनी तलवार मेरी बाजूमें घुसेड़ दी, पर दैवात् मेरा शरीर बाल बाल बच गया और तलवार ओवरकोटमेंसे सर्राती हुई निकल गई। उसे तलवार खींचनेका मौका न देकर मैं उससे खूब ताकतके साथ लिपट गया और कुछ देरके बाद उसे एक पत्थरपर दे मारा। उसके गिरते ही मैं झटपट उसकी छातीपर आसन जमाकर बैठ गया और अपने सामने लड़ते हुए दो व्यक्तियोंका हस्तकौशल देखने लगा।

कुछ समयके बाद यह देखकर मुझे बहुत ही आश्चर्य हुआ कि मैंने जिस सिपाहीकी सहायता की है वह और कोई नहीं महाराज शिवाजी हैं। मेरे आनन्दकी सीमा न रही। महाराज शिवाजीकी तलवार बिजलीकी तरह नाच रही थी। शत्रु महाराजके वारोंको रोकनेमें इस तरह लगा हुआ था कि उसे स्वतः वार करनेका अवसर ही न मिलता था। अंतमें उसने साहसपूर्वक शिवाजीपर एक वार किया। शिवाजी उसका वार व्यर्थ करनेके लिए एक कदम पीछे हट गये और उसी पैरको बदलकर उन्होंने अपनी तलवार इस तरह छोड़ी कि उसका सिर धड़से जुदा होकर धरतीपर जा गिरा। शत्रुके मरते ही मैं महाराजको अभिवादन करनेके लिए ज्यों ही उठा त्यों ही नीचेवाला आदमी अवकाश पाकर भाग गया। अँधेरा खूब फैला था, इससे थोड़ी ही दूर जाकर वह गायब हो गया। महाराजने मुझे देखते ही मुस्कराकर कहा—"फिरंगी बहादुर, आज तुमने मेरे प्राण बचाये हैं। तुमने हिन्दू जातिका बड़ा उपकार किया है। हम तुमपर बहुत प्रसन्न हैं, कल तुम दरबारमें आओ और जो चाहिए सो लो। तुमने हमारा जो उपकार किया है उसके बदले मैं तुमको अपना सर्वस्व अर्पण कर सकता हूँ।"

मैंने अत्यंत नम्रतासे महाराजको पुनः प्रणाम किया। मेरे साथ जो ब्राह्मण था वह उस घटनाको देखते ही किलेकी ओर चला गया था। अब वह ५-६ सिपाहियोंके साथ लालटेन लिये हुए आ पहुँचा। उजेलेमें देखा, मेरी लाठीकी चोट खाकर जो आदमी गिरा था वह मर गया था। सिपाहियोंने आकर देखा कि पास ही दो लाशें पड़ी हुई हैं और महाराजकी तलवार रक्तरंजित हो रही है, अतः उनके विस्मयकी सीमा न रही। महाराज शिवाजीने सिपाहियोंका आज्ञा दी कि वे इन लाशोंको उठवाकर ले चलें।

जाँच करनेपर माळूम हुआ कि हमला करनेवाले तीनों व्यक्ति मुसलमान थे और वे दीनइस्लामके जबरदस्त शत्रु शिवाजीका वध करके बहिश्तका सुख प्राप्त करनेकी कामनासे आये थे।

(६)

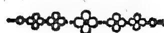
प्रातःकाल होते ही महाराज शिवाजीने मुझे बुला भेजा। रीत्यनुसार मैं दरबारमें उपस्थित हुआ। महाराजने मुझे आदरके साथ बिठलाया। फिर उन्होंने कलकी घटनाका सारा वृत्तान्त सुनाकर दरबारियोंसे कहा कि "यदि कल यह बहादुर न होता तो मेरे प्राण बचनेमें संदेह था।" सब लोग मेरे मुँहकी ओर देखने लगे। फिर महाराजने मुझे पास बुलाकर अपने गलेकी मोतियोंकी माला मेरे गलमें पहिना दी और कहा—" वीर, मैं तुम्हारा बड़ा कृतज्ञ हूँ। तुम्हें जो चाहिए हो सो माँग लो।" मैंने सोचा कि इस समय महाराज प्रसन्न हैं; मंजूषा मिलना कोई कठिन बात नहीं है। पर ऐसा अवसर बार बार नहीं आता है। मंजूषा एक मामूली चीज़ है, उसकी प्राप्तिसे केवल मेरे चाचा ही प्रसन्न होंगे। अतएव इस समय कोई ऐसी वस्तु क्यों न माँगूँ जिससे सारी अँगरेज़ जातिको लाभ पहुँचे। इस समय मेरे मनमें जातिप्रेम इस तरह उमड़ उठा था कि मैं

जिस प्यारी वस्तु (मंजूषा) के लिए इतने कष्ट सहकर यहाँ तक आया था, और जिसकी प्राप्तिके लिए कुछ समय पहले लालायित था, उसका मोह एकदम छोड़ बैठा । मि० बाडटनने शाहजहाँके दरबारमें जो कुछ माँगा था मुझे उसका स्मरण हो आया । मैंने कुछ बल संग्रह करके कहा—"महाराजके राज्यमें हम लोगोंको व्यापार करनेकी पूर्ण स्वाधीनता प्रदान की जावे।" महाराजने प्रसन्न होकर कहा—"हाँ, अँगरेज़ हमारे मित्र हैं। उनके साथ हमारी पूर्ण सहानुभूति है। आजसे जो अँगरेज़ हमारे राज्यमें व्यापारके लिए आवेंगे, उनकी पूर्ण रक्षा और सहायता की जावेगी।" कुछ समय बाद महाराजने फिर कहा——"कुछ दिन पहले तुमने अपनी मंजूषाके लिए प्रार्थना की थी, इस समय तुमने उसे क्यों नहीं माँगा ?" मैंने कहा——"महाराज, अपने हितकी अपेक्षा अपनी जातिका हित करना उचित समझकर मैंने अपनी स्वार्थवृत्तिको दबा दिया और सारी जातिकी भलाईके लिए महाराजसे प्रार्थना की।" महाराजने प्रसन्न होकर मुझे वह मंजूषा और बहुतसी बहुमूल्य चीजें देकर बिदा कर दिया ।

कुछ दिनोंके बाद मैं अपने विश्वासपात्र नौकरके साथ सूरत लौट आया। वहाँ पहुँचनेपर मेरे चाचाने मेरा बड़ा सत्कार किया। जब मैंने उनकी खोई हुई मंजूषा दिखलाई तब उनके हर्षका पारावार न रहा। एक दिन चाचाने कहा—"मैं कई दिनसे तुम्हारे आनेकी वाट देख रहा हूँ। मेरी एकमात्र कन्या '———' तुम्हारे साथ विवाह करना चाहती है । अब शीघ्र विलायत चलो—यह काम बहुत ज़रूरी है।" ऐसा कहके उन्होंने अपनी जेबसे एक चिट्ठी निकालकर मेरे सामने फेंक दी। यह चिट्ठी और किसीकी नहीं, मेरी प्रणयिनीकी थी।

जिस दिन मेरा विवाह हुआ उस दिन मैंने महाराज शिवाजीकी दी हुई वह मोतियोंकी माला अपनी प्रिय पत्नीके गलेमें पहिना दी।

रक्षा-बन्धन।



राजपूतानेके एक पहाड़ी किलेमें कुछ बूढ़े सरदार नागौरके राजा मानसिंहके साथ उदासीन भावसे बैठे हैं। वहाँ जितने मनुष्य हैं, उनके चेहरोंसे माळूम पड़ता है कि वे किसी गहरी चिन्तामें मग्न हैं। उनके चिन्तित होनेका कारण यह था—कुछ दिन पहले राजा मानसिंह अपनी सारी सेना युवराजके साथ सम्राट् अकबरकी सहायताके लिए दक्षिण भेज चुके हैं, यह जानकर गुजरातके बादशाहने एक बड़ी भारी फौज़ लेकर नागौरपर चढ़ाई कर दी और सहसा उसपर अधिकार कर लिया। और कुछ उपाय न देखकर राजा मानसिंह अपने स्त्री, पुत्र, धन, दौलत और कुछ सरदारों मुसाहबोंके साथ इस गोड़वारके किलेमें भाग आये हैं। नागौरकी प्रजा और राजमहल सब शत्रुओंके अधीन हो गये हैं। गोड़वार किलेमें अमित अन्न रक्खा है, तालावोंमें स्वच्छ जल भी खूब है और वहाँका किला भी दुर्गम और दृढ़ है; तो भी किलेकी रक्षा करनेवाले सिपाही बहुत कम हैं और जो हैं वे भी बूढ़े हैं। गुजराती सेना किलेके चारों तरफ पड़ाव डाले पड़ी है। यही चिन्ता राजा मानसिंह और उनके बूढ़े सरदारोंको दुखित कर रही है।

बहुत कुछ सोच विचारके बाद यही निश्चय हुआ कि हालमें थोड़ी बहुत जितनी सेना है उसीसे दृढ़तापूर्वक आत्मरक्षा की जाय। संभव है कि इतनेमें बाहरसे कोई सहायता मिल जाय। यदि बाहरसे सहायता न मिलेगी और हम अपनी आत्मरक्षा करनेमें असमर्थ हो जायँगे, तो

हमारी स्त्रियाँ जौहरव्रतका अवलम्बन करेंगी और हम सच्चे वीरोंकी तरह सैकड़ों शत्रुओंको मारकर वीर गतिको प्राप्त होंगे।

यह मत निश्चित होते ही सरदार लोग पहलेहीके समान चिन्तित भावसे अपने अपने खेमोंमें चले गये। राजा मानसिंह भी उदासीन भावसे अंतःपुरको गये। राजपरिवार अपने भविष्यकी चिन्तामें व्याकुल हो रहा था। राजासाहबको आया हुआ देखकर राजकुमारी पन्नाने पूछा—"पिताजी, क्या समाचार है?" मानसिंहने दुःखभरे शब्दोंमें कहा—"यदि बाहरसे उचित सहायता न मिली, तो तुम लोगोंको शीघ्र ही इस संसारसे बिदा होनेके लिए तैयार रहना चाहिए।" यह सुनकर राजा मानसिंहकी वृद्धा माता जिसकी उमर लगभग सौ वर्षकी थी प्रसन्न होकर कहने लगी—"बेटा, तुम चिन्ता मत करो, हम सब सच्ची राजपूतानियोंकी तरह मरनेके लिए तैयार हैं।"

इस समय राजकुमारी पन्नाकी विलक्षण दशा थी। उसकी उम्र लगभग १६ वर्षकी थी। राजा मानसिंह उसे प्राणोंसे अधिक चाहता था। वह इस समय खिड़कीके पास गंभीर भावसे बैठी हुई थी। सहसा उसकी नजर सामने सुदूर प्रान्तमें स्थित एक पहाड़ीपर पड़ी। उस पहाड़ीपर एक किला बना हुआ था, जो अरिकन्दके नामसे प्रसिद्ध था। इस किलेका स्वामी एक नवयुवक और वीर राजपूत था। उसका नाम उम्मेदसिंह था। दो वर्ष पहले राजकुमार उम्मेदसिंह किसी लड़ाईमें विजयी होकर नागौर आया था। उस समय उसकी वीरमूर्तिको देखकर पन्ना बहुत प्रसन्न हुई थी। इसके बाद ही अरिकन्द और नागौर दोनों रियासतोंमें सरहद्दी झगड़ा उठ खड़ा हुआ। फल यह हुआ कि उसी समयसे ये दोनों एक दूसरेके शत्रु हो गये।

पन्नाके हृदयमें सहसा एक विचार उठा। वह सोचने लगी कि यदि मैं उम्मेदसिंहको 'राखी' भेजूँ, तो क्या वह इस संकटके समयमें हमारी सहायता न करेगा? क्या कोई वीर राजपूत आपसी मनोमालिन्यके कारण अपने जाति भाइयोंको विदेशी मुसलमानोंके आक्रमणसे बचानेमें कभी कुण्ठित हो सकता है? कदापि नहीं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि रक्षाबंधन पाकर कोई कुलीन राजपूत इस धर्मबंधनसे विमुख नहीं हो सकता। यह सोचकर वह अपने पिताके पास आई और बोली—"पिताजी, क्या अरिकन्दके राजकुमारने आपके या आपकी प्रजाके साथ कोई ऐसा व्यवहार किया है जो कभी क्षमा नहीं किया जा सकता है?" मानसिंहने कहा—"नहीं, उसने ऐसा तो कोई अपराध नहीं किया; केवल सरहद्दी भूमि दबा लेनेके कारण उससे कुछ मनोमालिन्य हो गया है। वह जमीन यद्यपि किसी कामकी नहीं है—रेतीली और बंजर है, तथापि जो जमीन १०० वर्षसे हमारे अधिकारमें चली आती है उसे दूसरेके अधिकार करनेपर त्याग देना हमारे यश और वीरत्वमें बट्टा लगानेवाली बात है। अतएव दक्षिणसे राजकुमारके आनेपर लड़ाई करके उस जमीनपर पुनः अधिकार कर लिया जायगा। परन्तु इस समय इन बातोंसे क्या प्रयोजन है? इस समय तो हम लोग मुसलमानोंके पंजेमें फँसे हुए हैं। उनसे उद्धार पाना कठिन दिखाई देता है।" पन्ना बोली—"पिताजी, इसी विपत्तिसे रक्षा पानेके लिए मैंने एक युक्ति सोची है। आप अरिकन्दके राजकुमार उम्मेदसिंहके पास राखी भेजनेकी मुझे आज्ञा दीजिए। मुझे आशा है कि वे अवश्य ही हमारी सहायता करेंगे। मानसिंहने कहा—"क्या हम ऐसे व्यक्तिसे जिससे हमारी प्रत्यक्ष रीतिसे शत्रुता है सहायता करनेकी प्रार्थना करेंगे? क्या एक ऐसे पुरुषके सामने—जिसने हमारे सामने आँख उठाकर नहीं देखा है—हम

दीनता प्रकट करेंगे? ऐसा कदापि नहीं हो सकता। तू इस बातको भुला दे।"

मानसिंह वास्तवमें असंतुष्ट हो गये थे, परन्तु पन्नाने उनको नम्रता-पूर्वक समझा कर कहा—"संकटके समय राखी (रक्षाबंधन) भेजकर सहायता लेनेकी परिपाटी राजपूतोंमें परम्परासे चली आती है। जब राजपूत स्त्रियोंद्वारा मुसलमानों तकको राखियाँ भेजी गई हैं, तब एक स्वजातीय बन्धुको, जो हमारा शत्रु ही क्यों न हो, राखी भेजनेमें क्या हानि है? राजपूतोंमें यह नियम सदासे चला आता है कि जब कोई बाहरी शत्रु हमला करता है तब वे सब आपसी वैरभावको भूलकर एक दूसरेकी सहायता करनेके लिए तत्पर हो जाते हैं। दूसरे मान लीजिए कि मुसलमानोंकी विजय होनेसे आज नागौरका किला उनके हाथमें चला गया, तो आप क्या समझते हैं कि कल अरिकन्दके किले पर भी उनका यह नीला झंडा न फहरावेगा? यह सब सोचकर यदि वह हमारी सहायता करनेके उद्देश्यसे नहीं तो कमसे कम अपनी सहायता—अपनी रक्षा—के उद्देश्य तो हम लोगोंकी सहायता करनेपर बाध्य होगा।

पन्नाके प्रभावशाली वचनोंको सुनकर मानसिंह राजी हो गये और उन्होंने एक विश्वासी दूतके द्वारा उम्मेदसिंहके पास राखी भेजनेका निश्चय कर लिया।

जो राखी उम्मेदसिंहके पास भेजी जानेवाली थी वह सुवर्णके तारोंसे बनी थी और उसमें बहुमूल्य हीरा मोती जड़े हुए थे। एक क्षत्रियकुमार जिसका नाम बेनीसिंह था राखी ले जानेके लिए चुना गया। बेनीसिंह इस राखीको अपने साफेमें बाँधकर अँधेरी रातके समय एक रस्सीके द्वारा किलेकी दीवारसे नीचे उतर गया। किलेके चारों ओर मुसलमानी सेना

घेरा डाले पड़ी थी—जहाँ तहाँ पहरेवाले और संतरी टहल रहे थे। तो भी बेनीसिंह अँधेरेकी सहायतासे संतरियों और पहरेवालोंकी नज़र बचाता हुआ चलने लगा। जब वह दूर निकल गया और शत्रुके पहरेवालोंको, जो आग जलाये हुए बैठे थे, पार कर गया, तब एक तरहसे निश्चिन्तसा हो गया और निर्भय होकर कुछ जल्दी जल्दी चलने लगा। परन्तु वह थोड़ा ही आगे बढ़ा था कि सहसा एक बलवान् पुरुषने एक झाड़ीमेंसे निकलकर उसकी गर्दन पकड़ ली। बेनीने बहुत ज़ोर लगाया पर उसकी एक न चली। पकड़नेवालेने कहा—"जनाब, बहुत उछल कूद मत कीजिए, सीधे सीधे चले चलिए और गुजरातके बादशाहसे मुलाकात फरमाइए।" बेनी लाचार होकर उसके साथ चलने लगा। शोर न हो इस कारण बेनीसिंहने ज्यादा हुज्जत न की, वह चुपचाप उसके साथ जाने लगा। इधर उसने बेनीको कमज़ोर और छोटे कदका समझकर उसका एक हाथ छोड़ दिया। अवसर पाकर बेनीसिंहने अपनी कमरसे 'बिछुआ' निकालकर एकाएक उसकी छातीमें भोंक दिया। बिछुआ लगते ही वह चिल्लाया; पर इधर ज्यों ही उसका हाथ ढीला पड़ा, त्यों ही बेनीसिंह एक झटका देकर 'नौ दो ग्यारह' हो गया। मुसलमान भी पीछे पीछे दौड़ा, परन्तु वह उस रात्रिके घने अंधकारमें किस झाड़ीमें जा छुपा—कुछ पता न चला। परन्तु इस छीना झपटी और भाग दौड़में उसका साफा—जिसमें राखी बँधी हुई थी—कहीं गिर गया था, इसलिए वह छुपा छुपा अपने साफेकी चिन्ता कर रहा था। जब उसका पीछा करनेवाला मुसलमान आगे बढ़ गया तब बेनीसिंह चुपचाप अपना साफा उठाकर अपनी राह लग गया।

गंभीर निशाकी निस्तब्धताको भंग करनेवाली उस मुसलमानकी चीखको सुनकर कई सिपाही हाथमें मसालें लिये हुए घटनास्थलपर आ

पहुँचे। बेनीसिंहने दूरसे देखा कि एक मुसलमान सैनिक जो देखनेमें सेनाका सरदार मालूम पड़ता है एक काले घोड़ेपर चढ़ा हुआ सबको हुक्म दे रहा है। कुछ समयके बाद सिपाहियोंको चारों ओर भेजकर वह स्वतः जंगलकी ओर बढ़ा। जंगलका रास्ता बहुत पथरीला और ऊँचा नीचा था। इसलिए कुछ दूर चलकर वह घोड़ेपरसे उतर पड़ा और घोड़ेकी लगाम साईसको पकड़ाकर पैदल ही जंगलमें घुस गया।

साईससाहब पूरे अमीर और आरामतलब थे। आधी रातको सहसा जागकर उन्हें यहाँ आना पड़ा था, इसलिए मन ही मन कुढ़ रहे थे और साथ ही नींद भी आ रही थी। इसी समय बेनीसिंह झाड़ीसे निकलकर आगे बढ़ने लगा। उसे देखते ही आपने हुकूमत बतलाते हुए कहा—"अबे गधेके बच्चे! उधर कहाँ जा रहा है? इधर आकर इस घोड़ेकी लगाम पकड़।" बेनीसिंह चुपचाप आकर पास खड़ा हो गया और घोड़ेकी लगाम थाम कर कहने लगा—"अगर आप कुछ इनाम देना मंजूर करें, तो मैं घोड़ेको पकड़े रहूँ और आप आरामके साथ इस चट्टानपर सो जायँ।" साईस इसका कुछ उत्तर न देकर थोड़ी दूर एक चट्टानपर पैर फैलाकर जा सोया।

बेनीसिंह घोड़ेको धीरे धीरे टहलाता हुआ उसकी पीठपर हाथ फेरता रहा और ज्यों ही उसने देखा कि साईसकी आँखें झपकने लगी हैं वह एक छलाँग मारकर घोड़ेकी पीठपर जा बैठा और एड़ लगाकर अरिकन्दकी ओर चल दिया।

इस समय चन्द्रमाका उदय हो चुका था। चाँदनी धीरे धीरे फैलकर अंधकारकी गाढ़ता कम कर रही थी। जब उसने पीछेकी ओर देखा तो ५०--६० सवार पीछे आते हुए दिखाई दिये। घोड़ा बहुत तेज़

था और सवार भी कुछ कम न था; अतः घंटोंका रास्ता मिनटोंमें तय होने लगा। प्रातःकाल होते ही बेनीसिंह अरिकन्दके फाटकपर जा पहुँचा।

घोड़ेसे उतरकर बेनीसिंहने पहरेदारसे कहा—"एक जरूरी कामके लिए मुझे उम्मेदसिंहजीसे इसी समय मिलना है।" पहरेदार उसे साथ लेकर राजमहलकी ओर चला। जिस समय बेनी वहाँ पहुँचा उस समय उम्मेदसिंह अपने एक साथीके साथ शिकारके लिए जानेकी तैयारी कर रहे थे—कई शिकारी कुत्ते खड़े हुए थे। बेनीसिंहने जाकर अभिवादन किया और अपनी पगड़ीमेंसे राखी निकालकर उसे उनके दाहिने हाथमें बाँध दिया। फिर उसने यवनोंद्वारा गोड़वारके परिवेष्टित होने और राजकुमारी पन्नाका राखी भेजनेका समाचार कह सुनाया।

वीर-दर्पसे उम्मेदसिंहकी भौंहें तिरछी हो गईं। वह सोचने लगा आज दो वर्षसे जिसके साथ घोर शत्रुता चल रही है उसकी कन्याने मुझे सहायताके लिए स्मरण किया है—यह मेरा अहोभाग्य है। उसने अपने साथीसे कहा—"मित्र जालिमसिंह, अब मुझे शेर, हिरण, चीता आदिसे बढ़कर शिकार मिल गया है। गुजरातके बादशाह फीरोजशाहने नागौरके राजा मानसिंहको गोड़वारके किलेमें घेर रक्खा है, और उसकी परम सुन्दरी कन्याने रक्षाबंधन भेजकर मुझे सहायताके लिए बुलाया है। इसलिए अब मैं उनकी रक्षाके लिए गोड़वार जाता हूँ।" जालिमसिंहने हँसते हुए कहा—"तो क्या आप मुझे इस बढ़ियाँ शिकारसे वंचित रखना चाहते हैं? जालिमसिंह भी तुम्हारे झंडेके नीचे अपने पचासों सवारों सहित गोड़वार जाकर राजपूतोंके शत्रुओंकी शिकार करेगा।"

जालिमसिंहको अपने साथ चलनेके लिए तैयार देखकर उम्मेदसिंदको बड़ा आनंद हुआ। शीघ्र ही सेना सज्जित की जाने लगी। बेनीसिंहका खूब आदर सत्कार किया गया।

* * * *

इधर फीरोज़शाह कई दिनसे उन तोपोंकी प्रतीक्षा कर रहा था जो उसने गोड़वारका किला ध्वंस करनेके लिए गुजरातसे मँगाई थीं। परन्तु प्रतीक्षा कब तक की जाय, उसने गोड़वारके किलेपर धावा शुरू कर दिया। इस बार उन्होंने रस्सा या सीढ़ियाँ लगाकर किलेपर चढ़ जानेका निश्चय किया। यह काम एक ऐसे आदमीकी सहायतासे किया जानेवाला था, जो राजमहल और किलेका पूरा भेदिया था। आधी रातके समय वह एक रस्सी लेकर कुछ सिपाहियोंके साथ किलेकी दीवारके पास पहुँचा और शीघ्र ही एक गुप्त मार्गसे किलेकी दीवारपर चढ़ गया। वहाँसे उसने एक रस्सा नीचे लटका दिया। सिपाही उस रस्सेपरसे ऊपर चढ़ने लगे। इतनेमें उस भेदियेका सिर कट कर नीचे गिर पड़ा और साथ ही रस्सी भी कट गई। रस्सीके कटते ही उसपर चढ़नेवाले मुसलमान नीचे गिर कर बे-तरह घायल हुए और उनमेंसे कई मर भी गये। पीछे माळूम हुआ कि एक संतरीने इनको चढ़ते हुए देख लिया था, इसलिए उसने वहाँ जाकर उस विश्वासघाती भेदियेके सिरको तलवारके एक ही हाथमें जुदा कर दिया—साथ ही रस्सी भी काट दी।

इस प्रयत्नके विफल होनेपर उन्होंने सुरंग और खाईसे काम लेनेकी युक्ति सोची और तदनुसार कार्य भी होने लगा।

दूसरे दिन सन्ध्या हो जानेके बाद एक मनुष्य बड़ी कोशिशसे किलेकी दीवारपर चढ़ गया। यह और कोई नहीं बेनीसिंह था। उसने

आकर उम्मेदसिंहका दिया हुआ एक मोतियोंका हार राजकुमारी पन्नाके सामने रखकर वीर जालिमसिंह और उम्मेदसिंहके सेना सहित आनेका संवाद सुनाया। यह शुभ सम्वाद सुनकर सबके हृदय हरे हो गये।

इधर उम्मेदसिंह और जालिमसिंह दोनों वीर अपनी अपनी फौज लेकर गोड़वारकी ओर रवाना हुए। रास्तेमें उन्होंने सोचा कि हमारे पास कुल पाँच हजार सेना है और शत्रुके पास इससे तिगुनी है। ऐसी हालतमें सामने जाकर लड़ाई छेड़ना उचित नहीं है। अभी छिपकर मौका देखना चाहिए और सबसे पहले गुजरातकी सहायताका रास्ता बंद कर देना चाहिए। ऐसा करनेसे मुसलमानी सेनाको रसद पहुँचना बंद हो जायगा। यह सोचकर ये लोग गोड़वारसे अहमदाबाद जानेवाली सड़कके आसपास झाड़ियोंमें जा छिपे।

ये लोग उस स्थानपर पहुँचे ही थे कि एक राजपूत सवारने आकर कहा कि गुजरातसे मुसलमानी तोपखाना कुछ सेनाके साथ आ रहा है। यह समाचार सुनते ही उम्मेदसिंह दो हज़ार सेना लेकर आक्रमण करनेको तैयार हो गया। शेष सेना सड़कके दोनों ओर छिपा दी गई।

कुछ समय बाद दूरसे तोपखाना दिखाई देने लगा। तोपोंमें बड़े बड़े काठियावाड़ी बैल जुते हुए थे। तोपखानेके आगे आगे चलनेवाली जो एक घुड़सवार सेना थी, वह बेखटके निकल गई। ज्यों ही तोपखाना सामने आया, त्यों ही उम्मेदसिंहने उसपर तीर और गोलियाँ छोड़नेकी आज्ञा दी। इस अचानक आक्रमणसे तोपखाना तीन तेरह हो गया। बैल भड़ककर तितर-बितर हो गये। बहुतेरे गोलंदाज़ और मुसलमान सिपाही मारे गये। अंतमें पोर्तगीज़ गोलंदाज और मुसलमान सवार तोपोंके सहित राजपूतोंके शरण हो गये। तोपें बहुत बड़ी बड़ी और वज़नदार थीं। उनको राजपूत लोग अपने साथ नहीं ले जा सकते थे।

अतएव उन्होंने यह सोचकर कि यदि इन्हें ऐसी ही छोड़ देंगे तो मुसलमान ले जायँगे—उन्हें पासवाले एक तालाबमें डुबा दिया।

तोपखानेके नष्ट होनेका समाचार सुनकर फीरोजशाहको बड़ा दुःख हुआ। उसे तोपखानेका ही बल-भरोसा था; परन्तु अब उसे गोड़वार जीतनेकी आशा बहुत कम रह गई। मुसलमानी सेना भी निराश हो गई—वह सोचने लगी कि न जान अब इस राजपूतानेकी रेतसे निकलकर गुजरातके हरे भरे जंगल देखनेको मिलेंगे या नहीं।

इधर राजपूतोंके दिल दूने बढ़ गये। तोपखाना छीने जानेकी खबर सर्वत्र फैल गई और एक एक दो दो करके आसपासके राजा और बूढ़े सरदार भी नागौरकी सहायताके लिए आने लगे। वीर युवाओंका तो वहाँ एक प्रकारसे अभाव था, क्योंकि वे सब अकबरकी सहायताके लिए दक्षिण गये थे। पर उम्मेदसिंहको इन बूढ़ोंके आनेसे भी बहुत सहायता मिली।

अब तो फीरोजशाहकी फौजपर बड़ी विपद आ पड़ी। गुजरातकी सड़क बन्द हो जानेके कारण रसद मिलनी बंद हो गई। आखिर कोई द्वार न देखकर उसने गोड़वार किलेपर धावा करना निश्चित किया। फाटकके पास एक सुरंग लगाई गई जिससे किलेकी दीवारका कुछ हिस्सा उड़ गया। मुसलमान लोग दीन दीन चिल्लाने लगे। इसी समय भीतरसे पत्थर और तीरोंकी वर्षा होने लगी। उधर पीछेसे उम्मेदसिंहने धावा किया। यह देख फीरोजशाहने अपनी सेना किलेके फाटकसे हटाकर उम्मेदसिंहकी ओर बढ़ाई। तब तक जालिमसिंह भी अपने पचासों सवारों सहित आ पहुँचा और चारों ओर घेरा लगाने लगा। जिस जगह मुसलमानी सेना कमजोर दिखाई देती थी, वह उसी जगह आक्रमण करता था। इसी तरह बड़ी देर तक युद्ध होता रहा, पर हार जीत किसीकी न हुई। संध्याको दोनों सेनायें अपने डेरोंको लौट गईं।

फीरोज़शाह समझ गया कि जब तक उम्मेदसिंह पूर्ण रीतिसे परास्त न हो जायगा, तब तक गोड़वार किलेपर अधिकार करनेकी आशा व्यर्थ है। दूसरे, गुजरातकी आमद-रफ्तका रास्ता साफ करना भी ज़रूरी था। प्रातःकाल होते ही गुजरात-सड़कके नाकेपर आक्रमण प्रारंभ हुआ। उसने अपनी सेनाके तीन दल किये। एक वह साथ ले गया, एक दल बीचमें आकर सहायता देनेके लिए नियत किया गया और एक दल गोड़वार किलेपर धावा करनेके लिए रक्खा गया। फीरोज़शाह एक बड़े हाथीपर चढ़ा हुआ दूरहीसे दिखाई देता था। बहुसंख्यक यवन सेनाके सामने जाकर आक्रमण करना राजपूतोंको कठिन जान पड़ा; इसलिए उन्होंने चतुराईके साथ ही काम करना उचित समझा। उम्मेदसिंह जैसा वीर था वैसा ही बुद्धिमान् भी था। उसने यह बात पहले ही ताड़ ली कि यदि सामनेसे हमला किया जायगा तो हार खानी पड़ेगी। अतएव राजपूत सेना एक ऐसी जगह जाकर खड़ी हो गई, जहाँसे वह शत्रुओंपर तीर फेंक सकती थी। ज्यों ही शत्रु समीप आये, त्यों ही उसने उनपर एकदम सहस्त्रों तीर और बन्दूकोंकी गोलियाँ छोड़कर पीछे लौटना प्रारंभ कर दिया। शत्रुओंने इनका पीछा किया। वे इसी तरह आक्रमण करते और पीछे भागते शत्रुसेनाको गोड़वारसे बहुत दूर ले गये।

ज़ालिमसिंहके पास चार हज़ार सेना थी। शत्रुसेनाको दूर आया जानकर उसने एकदम दाहिने हाथकी ओर मुड़कर मुसलमानी सेनाके मध्य भागपर धावा कर दिया। इस धावेके कारण मुसलमानोंकी सेना छिन्न भिन्न हो गई।

इधर उम्मेदसिंह एक हज़ार सिपाहियोंको साथ लेकर शीघ्रताके साथ गोड़वार किलेकी ओर रवाना हुए। राजा मानसिंह किलेकी एक ऊँची बुर्ज़पर बैठे हुए युद्धका दृश्य देख रहे थे। इस सेनाको गोड़वारकी

ओर आते देख कर पहले तो वे कुछ शंकित हुए; परन्तु जब वह सेना कुछ समीप आगई और सेनाका पंचरंगा झंडा दिखाई देने लगा, तब उन्हें बहुत सन्तोष और आनंद हुआ।

उम्मेदसिंह एक हज़ार वीरोंके सहित तेज़ीके साथ गोड़वारकी ओर आ रहे थे। जब वे गोड़वारके फाटकपर पड़ी हुई शत्रुसेनाके बिलकुल समीप आ गये, तब विश्राम लेनेके लिए कुछ समयके लिए ठहर गये। यह देख मुसलमानी सेनाने उन्हें कुछ हताश हुआ समझ लिया और इस कारण ज़ोर-शोरसे उनपर हमला करना प्रारंभ कर दिया। परन्तु वीर उम्मेदसिंह इससे ज़रा भी विचलित न हुआ। वह सावधानीके साथ उनका सामना करने लगा। इसी समय पहाड़परसे कई हजार अश्वारोहियोंका दल मुसलमानी सेनापर टूट पड़ा। इस अचानक आक्रमणसे शत्रुसेना स्थिर न रह सकी। चारों तरफ़से तोप और बन्दूकोंकी गोलियाँ आ आकर उनको छिन्न भिन्न करने लगीं। अवसर जानकर किलेपरसे वृद्ध राजपूत वीरोंने भी पैने पैने तीर और तप्त तेल छोड़ना प्रारंभ किया। फलतः शत्रुसेनाको भागनेके सिवा और कोई उपाय न सूझा। किलेका सदर फाटक खुल गया। विजयी राजपूत सैनिक आनंद ध्वनि करते हुए किलेमें घुस गये।

इधर फीरोज़शाहने अपनी सेनाका मोरचा उखड़ा हुआ देखकर सोचा कि अब विजय प्राप्त करना तो दूर है, दिनपर दिन अपनी रक्षा करना भी कठिन होता जाता है। उम्मेदसिंहकी सेना किलेमें पहुँच जानेसे अब किला पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक सुरक्षित हो गया है। इसके सिवा दिनपर दिन राजपूतोंकी संख्या बढ़ती जा रही है। दुर्दैववश यदि इसी समय राजकुमार दक्षिणसे सेनासहित आ पहुँचेगा तो हम लोगोंका यहाँसे निकल भागना भी दुष्कर हो जायगा। ये सब बातें सोचकर

उसने सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित किया, जिसे राजपूत लोगोंने स्वीकार कर लिया। दूसरे दिन फीरोजशाह अपनी सेनासहित गुजरातको रवाना हो गया। उसने सन्धिके अनुसार नागौरको भी खाली कर दिया।

शत्रुसेनाको पराजित करके जब उम्मेदसिंह किलेके भीतर पहुँचे तब राजा मानसिंह और उनके सरदारोंने उनका खूब आदर-सम्मान किया। उम्मेदसिंहकी सुजनता, धीरता, वीरता और युद्धकौशलको देखकर वृद्ध मानसिंहके नेत्र अश्रुपरिपूर्ण हो गये। उन्होंने गद्गदकंठ होकर कहा—"हे वीर, तुमने मेरे धन, जन, राज्य और प्रतिष्ठाकी रक्षा की है। मैं इसका बदला नहीं चुका सकता। मेरा राज्य, महल, धन, रत्न आदि जो तुम्हें चाहिए सो हाज़िर है। आज्ञा दो कि कौनसी वस्तु हाजिर की जाय।" उम्मेदसिंहने मुस्करा कर कहा—"यद्यपि मैंने आपका कोई उपकार नहीं किया है; मैंने तो अपने राजपूत धर्मका पालन मात्र किया है। तथापि आप प्रसन्न होकर मुझे कुछ देना ही चाहते हैं, तो आप अपने यहाँका एक अमूल्य रत्न देकर मुझे भाग्यशाली बनाइए।" मानसिंहके मुकुटमें एक बड़ा हीरा जड़ा था; वही उनके यहाँ सबसे श्रेष्ठ और कीमती था। मानसिंहने समझा कि उम्मेदसिंह इसे ही चाहता है। अतएव उन्होंने कहा—"हाजिर है, लीजिए; मैं बड़ी प्रसन्नताके साथ इसे समर्पण करता हूँ।" उम्मेदसिंहने बातों ही बातोंमें प्रकट कर दिया कि मैं निर्जीव—जड़ रत्न नहीं, वरन् सुकोमल और सजीव रत्न चाहता हूँ।" यह सुन मानसिंहके हर्षका ठिकाना न रहा। उन्होंने अपने उस अनुपम कन्या-रत्नको उम्मेदसिंहको समर्पित करना सर्वथा योग्य और उपयुक्त समझा। निदान दोनों ओरसे बड़े आनंद और समारोहके साथ राजकुमारी पन्ना और उम्मेदसिंहका विवाह हो गया।

हिम्मतसिंह।



सन्ध्याका समय है। एक नगरके दक्षिण फाटकसे एक हजार अश्वारोही राजपूतोंका समूह जा रहा है। उन लोगोंके चेहरोंपर एक गंभीर उदासीके चिह्न दिखाई देते हैं। यद्यपि उनकी सूरत शकलसे साफ मालूम पड़ता है कि वे सच्चे बहादुर वीर राजपूत हैं; परन्तु आज उनके चेहरोंपर प्रसन्नता नहीं है। सभी लोग किसी तरहकी बातचीत किये विना चुपचाप चले जा रहे हैं। केवल घोड़ोंकी टापोंकी ध्वनि ही निस्तब्धताको भंग कर रही है। एक नवयुवक सब सवारोंके आगे आगे एक बड़े घोड़ेपर चढ़ा हुआ जा रहा है। रँग ढँगसे जाना जाता है कि वह इन सबका नायक है। उसका साज-सरंजाम एकदम काला है। काली पोशाक है, तलवारका म्यान भी काला है और जिस घोड़ेपर वह सवार है वह भी काला है। इन बातोंसे जान पड़ता है कि वह कोई राजकुमार है और उसे वनवास या देश-निकालेका दंड दिया गया है।

राजकुमार धीरके महाराजका ज्येष्ठ पुत्र और राज्यका उत्ताधिकारी है। उसके सद्गुणोंके कारण उसे सभी लोग चाहते हैं। उसने समय समयपर जो वीरता दिखलाई है, उससे उसकी ख्याति केवल धीर-राज्यमें ही नहीं, वरन् दूर दूर तक फैल गई है। परन्तु कनिष्ठ राजकुमारकी माता सूजाबाईने धीर-नरेशको इस बातपर विवश किया कि वह उसके पुत्रको युवराज बनावे और हिम्मतसिंहको आजन्म देश-निकालेका दंड देवे। राजा रानीके प्रेम-पाशमें बे-तरह जकड़ा हुआ था, इसीलिए एक दिन उसने

अपनी बड़ी रानीके पुत्र कुमार हिम्मतसिंहको देशनिकालेकी आज्ञा दे दी और छोटेको युवराजका पद दे दिया।

छोटे राजकुमारका नाम बाप्पालाल था। हिम्मतसिंहके चले जानेपर बाप्पालालके मनमें राजसिंहासनपर बैठनेकी लालसा दिनपर दिन बलवती होने लगी। वह पिताके मरने और राजसिंहासनपर बैठनेके शुभ दिनकी प्रतीक्षा एक साथ करने लगा।

इधर पितृभक्त हिम्मतसिंह पिताकी आज्ञा पाते ही घरसे चल पड़ा। वह अकेला ही नहीं गया; उसके एक हज़ार वीर योद्धा भी साथ गये, जो उसको कई बार लड़ाईमें साथ दे चुके थे। वृद्ध राजा इससे एक तरहसे प्रसन्न ही हुआ, क्योंकि वह नहीं चाहता था कि हिम्मतसिंहके हितैषी उसके राज्यमें रहें। उसे भय था कि बाप्पालालके राज्याभिषेकके समयमें लोग कहीं कुछ उत्पात न खड़ा कर दें। इस कारण राजकुमारके साथी योद्धाओंके चले जानेसे उसके मनकी एक बहुत बड़ी चिन्ता दूर हो गई।

सन्ध्या हो गई। चन्द्रमाका स्वच्छ प्रकाश चारों ओर फैल गया। राजकुमार हिम्मतसिंह और उनके साथी नगरसे तीन चार कोसकी दूरीपर एक जंगलमें पहुँचकर थोड़ी देरके लिए ठहर गये। आत्माभिमानी राजकुमार अधिक समय तक उदास और चिन्ताग्रस्त नहीं रहा। जन्मभूमि ज्यों ही उसकी दृष्टिसे ओटमें हुई, त्यों ही उसके मनसे देशनिकालेका दुःख भूल चला और उसके हृदयमें नवीन आशाओंका संचार होने लगा। वह जिस पदसे—जिस अधिकारसे अन्यायपूर्वक वंचित कर दिया गया था, उसी पद—उसी अधिकारको अपने बाहुबलसे विदेशमें जाकर प्राप्त करनेकी दृढ़ आशासे प्रसन्न हो उठा। कुछ समय

निस्तब्ध रहनेके उपरान्त राजकुमारके साथियोंने इस अन्यायका बदला लेने और अपने अधिकारको फिरसे लौटा लेनेके लिए प्रस्ताव किया; परन्तु राजकुमारने कहा--"वीरो, जब पिताजीने मुझे वनवासकी आज्ञा दी है, तब उनकी आज्ञाके विरुद्ध कोई विचार मनमें लाना अनुचित ही नहीं, वरन् महान् पातक है। दूसरे, घरू लड़ाई झगड़ोंमें अपनी शक्तिको नष्ट करके स्वदेशका अहित करना उचित नहीं है। आज कल देश बड़े भारी संकटमें फँसा हुआ है; विदेशी लोग धीरे धीरे मातृभूमिको पद-दलित कर रहे हैं। इस समय विदेशियोंके आक्रमणोंको रोककर स्वदेश तथा स्वधर्मकी रक्षा करना हम लोगोंका प्रथम कर्तव्य है।" यह कहकर उसने अपनी तलवार म्यानसे निकाल ली। उनके साथियोंकी तलवारें भी एकदम झन झन करती हुई चाँदनीमें चमकने लगीं।

रातके दस बज चुके हैं। मुग़ल साम्राज्यके अंतर्गत भोर नामक एक पहाड़ी किलेके कुछ पहरेदार शिकारके लिए गये हुए सैनिकोंकी राह देख रहे हैं। धीरे धीरे समय बीतने लगा। टन टन करके ग्यारह बज गये। इसी समय दूरसे लोगोंका कोलाहल सुनाई देने लगा। धीरे धीरे शिकारी लोग पास आ गये। पहरेवालोंने सेना-नायककी आज्ञासे किलेका दरवाजा खोला। ज्यों ही सब शिकारी फाटकके सामने पहुँचे, त्यों ही एकदम कई सहस्र तीर आकर उन लोगोंके शरीरमें छिद गये। कई आदमी हत और आहत हुए, कई विस्मय और भयसे यहाँ वहाँ देखने लगे। इतनेमें तीरोंकी एक बौछार और आई। इस बार अधिकांश सैनिक धराशायी हो गये। लोग इन तीरोंकी मारसे बचनेकी चिन्ता ही कर रहे थे कि इतनेमें एक सहस्र राजपूतोंका दल "जय, एक लिंगकी जय" कहता हुआ टूट पड़ा। शिकारी मुग़ल सैनिक इस अचानक आपत्तिसे किंचित् भी सचेत न थे, इस कारण उनको मार गिरानेमें राजपूतोंको अधिक

समय न लगा । उनमेंसे जो थोड़े बहुत लोग बचे, वे आसपासके गाँवोंमें अपने अपने प्राण लेकर भाग गये । कुछ गढ़रक्षक सिपाही जो किलेके भीतर थे, उन्होंने बड़ी फुर्तीके साथ किलेका फाटक बंद कर दिया । इससे हिम्मतसिंहके साथी किलेमें न घुस पाये । पर हिम्मतसिंह इससे निराश होनेवाले नहीं थे । उन्होंने शिकारियोंपर आक्रमण करनेके पहले ही कुछ पैदल सिपाहियोंको किलेकी पीछेकी ओर भेजकर नसेनियाँ लगानेकी आज्ञा दे दी थी और कह दिया था कि ज्यों ही फाटकपर कुछ गड़बड़ हो, त्यों ही वे किलेकी दीवालको लाँघ कर भीतर घुस आवें । ऐसा ही हुआ । फाटकपर मारकाट होते समय जो थोड़े बहुत गढ़-रक्षक थे, वे भी इस ओर दोड़े आये और उधर किलेके पश्चिम भागको बिलकुल अरक्षित पाकर राजपूत लोग किलेकी दीवालपर चढ़ गये और उन्होंने भीतरसे जाकर फाटक खोल दिया । जो थोड़े बहुत मुग़ल सैनिक वहाँ थे वे सब बंदी कर लिये गये । इस तरह बहुत आसानीसे हिम्मतसिंहने इस किलेको जीत लिया ।

भोरका किला राजपूतानेकी सरहदपर, एक पहाड़ीपर स्थित था और चारों ओरसे सुरक्षित था । इस किलेके तीन तरफ दृढ़ दीवालें थीं और चौथी तरफ स्वाभाविक बड़ी बड़ी ऊँची चट्टानें खड़ी थीं । इन चट्टानोंसे एक स्वाभाविक दीवालसी बन गई थी और वह शेष तीनों दीवालोंसे ऊँची थी । उन्हीं पत्थरोंको बाहरी ओरसे धोती हुई एक विशाल नदी बहती थी । उसके बहावके कारण चट्टानोंकी जड़में गढ़ेसे पड़ गये थे, जिनमें बरसातके दिनोंमें खूब पानी भर जाता था । राजपूत लोग जब इस किलेके भीतर पहुँचे तब वहाँ उनको अटूट अन्न-भांडार मिला । घी, दूधके लिए बहुतसी गायें और भैसें भी वहाँ थीं । अस्त्र, शस्त्र, गोली, बारूद आदि युद्धोपयोगी सामग्रीकी भी कमी न थी ।

बुर्जोंपर तोपें चढ़ी थीं और स्थान स्थानपर तेल, कड़ाही, बेलन आदि सब शत्रुसंहारिणी चीजें भी तैयार थीं।

किले और उसमेंकी अपार सामग्रीको पाकर राजपूत लोग पैर फैलाये नहीं पड़े रहे। वरन् वे बलवान् होकर किलेके चारों ओर अड़ौस पड़ौसके यवन-दुर्गोंपर हमला करने लगे और जहाँ जो मिला उसे संग्रह करके अपने दुर्गको भरने लगे। इस तरह कई महीने निकल गये।

कुछ दिनोंके पश्चात् एक बड़ी भारी मुगल सेनाने आकर उस दुर्गको घेर लिया। कई ज़बरदस्त तोपखाने भी आ पहुँचे। उन्होंने कई बार आक्रमण भी किया; परन्तु घिरे हुए राजपूतोंकी मारके सामने उनके पैर उखड़ गये।

मुसलमान सेना भलीभाँति समझ गई कि राजपूतोंपर विजय पाना कुछ सहज काम नहीं है। दीवालोंकी ऊँचाईके और ढालू जमीन होनेके कारण सन्मुखसे आक्रमण करना एक तरहसे असंभव ही था। उनका वह तोपखाना भी कुछ न कर सका। जो पत्थर लकड़ी आदि किलेपर फेंके जाते थे, वे पहाड़ीकी खड़ी चट्टानोंसे टकराकर नीचे लौट आते थे। पुरानी तोपोंके दो तीन गोले किलेकी दीवालतक पहुँच सके, पर उनसे किलेको कोई विशेष हानि न पहुँची। जब सेनापति आसफखाँने देखा कि इस तरह कुछ लाभ नहीं होगा, तब उसने एक प्राचीन युक्तिसे काम लेनेका निश्चय किया। उसकी सेनामें कई एक विशालकाय लड़ाके हाथी थे। अतः उन्हीकी टक्करोंसे उसने किलेके फाटकको तुड़वानेका निश्चय किया। पर गढ़रक्षक राजपूत वीरोंकी बाणावलीको भेदकर फाटक तक हाथियोंको ले जाना बड़ा ही दुस्तर कार्य था। इस कठिन समस्याको उसने कठसोई बनवाकर हल करनेका विचार किया।

कठसोई बनने लगी। जितनी कठसोई बनती जाती थी उसकी छत-पर गाय और भैसोंकी बड़ी बड़ी खालें डाल दी जाती थीं और उनकी आड़से मज़दूर लोग आगे काम चलाते थे। कठसोई ज्यों ज्यों किलेके समीप पहुँचने लगी, त्यों त्यों मज़दूरोंको ऐसा मालूम होने लगा कि उनपर मानों सदेह आपत्ति आ रही है। बाणोंकी तो बात ही जुदी है, यदि किलेकी दीवारोंपरसे साँग सेल और गुथने भी चलाये जाते, तो उन मज़दूरोंके प्राण मैदानमें थे; परन्तु दयार्द्रहृदय राजपूतोंको इस तरह दीन हीन प्रजाका रक्त बहाना पसंद न था। एक सप्ताहके कठिन परि-श्रमके बाद कठसोई बनकर तैयार हो गई। दीवारके पास इसका मुख भी खूब मजबूतीके साथ ढँक कर ठीक कर दिया गया। कठसोई इतनी मज़बूत बनाई गई थी कि उसके ऊपरसे भारीसे भारी बेलन चलाये जानेपर भी वह टूट नहीं सकती थी।

जिस दिन कठसोई बनकर तैयार हुई, उस रातको मुगल-सेनामें इस कठिन कार्य्यके निर्विघ्न समाप्त हो जानेके उपलक्षमें आनन्द मनाया जाने लगा। सभी लोग आनन्दमग्न थे। इतनेमें एकाएक सारी कठसोई जल उठी! मुगलोंकी सारी खुशी मिट्टीमें मिल गई, वे किंकर्तव्यविमूढ होकर रह गये। कोई इधर दौड़ने लगा और कोई उधर, पर इस बातका अनुसंधान कोई न कर सका कि आग कहाँसे और किसने लगाई। सहस्रों मुगल लोग अपने अपने डेरे छोड़कर जैसे बैठे थे वैसे ही उठ दौड़े और बाहर मैदानमें खड़े होकर अग्निलीला देखने लगे। इसी समय अचानक सहस्रों बाणोंने आकर उन्हें धराशायी कर दिया। अब तो लोग भयसे व्याकुल होकर यहाँ वहाँ दौड़ने लगे और बहुतसे अग्निकी ज्वालाओंसे झुलस गये। मुगलोंकी कई दिनोंकी मेहनत क्षणभरमें मिट्टीमें मिल गई और उनका सारा उत्सव—सारा रसरंग किरकिरा हो गया।

भोरका किला असलमें राजपूतोंका था। इसमें एक ऐसा गुप्त तलघरा था, जिसमेंसे होकर नदीकी ओरवाली चट्टानों तक एक मार्ग था। हिम्मतसिंह जैसा बहादुर था वैसा ही बुद्धिमान् और चतुर भी था। उसने किलेमें आते ही इस सुरंगका पता लगा लिया था। जिस समय रात्रिको मुगल लोग उत्सवमें मग्न हो रहे थे, उसी समय हिम्मत-सिंह मौका पाकर उसी सुरंगके रास्तेसे २० राजपूतोंके साथ कठसोईके समीप आ पहुँचा था। इधर तो उसने खूब तेल सींचकर आग लगवा दी और उधर जब वे लोग किंकर्तव्यविमूढ होकर यहाँ वहाँ भागने लगे, तब उनपर एकाएक बाण बरसा करके उन्हें धराशायी कर दिया।

कठसोई फिर बनकर तैयार हो गई, अबकी बार उसकी रक्षाके लिए उन्हें विशेष सावधानी रखनी पड़ी। मुगल-सेनामें तीन बड़े बड़े मस्त हाथी थे—फाटक तुड़वानेके लिए उन्हींसे काम लेनेका निश्चय किया गया। किलेके फाटकमें नीचेसे ऊपरतक बहुत पास पास हाथी-चिङ्घार कीलें जड़े हुए थे। इन कीलोंसे बचावके लिए हाथियोंके मस्तकोंपर मोटे फौलदके तवे कस दिये गये थे और महाबतोंकी रक्षाके लिए हाथियोंपर फौलादकी अम्बारियाँ लगाई गईं थीं। ज्यों ही पहला हाथी किलेके फाटकके समीप पहुँचा, त्यों ही उसपर किलेकी दीवारपरसे सैकड़ों बाण और बरछे बरसने लगे। हाथी व्याकुल होकर रास्ता छोड़ना ही चाहता था कि महाबतने अंकुश देकर उसे फाटककी ओर बढ़ाया। वह फाटकके समीप पहुँचा ही था इतनेमें ऊपरसे एक बड़ी शिला उसके मस्तकपर आ पड़ी। शिलाकी चोटसे व्याकुल होकर हाथी कठसोईकी लकड़ियोंको तोड़ता हुआ ऐसा भागा कि फिर किसी भी तरह खड़ा न हुआ। पास ही दूसरा हाथी तैयार खड़ा था, इशारा पाते ही वह बड़ी फुरतीके साथ फाटककी ओर झपटा। बहुतसे बाण और बरछे बरसाये गये, परन्तु

वह इन सबकी परवा न करके एकदम फाटकके सामने जाकर खड़ा हो गया। राजपूत लोग उसकी फुरतीको देखकर अवाक् हो रहे। परन्तु ज्यों ही उसने फाटकपर मस्तक लगाया, त्यों ही दैवात् उसके मस्तकपरका फौलादी तवा नीचे खिसक गया और कीले उसके मस्तकमें चुभ गये। वह बे-तरह चिंघाड़ता हुआ पहले हाथीके समान ही भाग गया।

अब मुग़ल लोगोंकी सारी आशा अवशेष तीसरे हाथीपर लग रही थी। यह हाथी पहले दो हाथियोंसे बहुत बड़ा और बलवान् था। उसने बाण और बरछोंकी मारको सहते हुए एकदम फाटकके समीप पहुँचकर उसपर ज़ोरसे मस्तकका धक्का लगाया। पहले ही धक्केसे अधिकांश कीले चौपट हो गये। दूसरी बार उसने अपनी सारी ताकतको काममें लाकर ऐसा धक्का लगाया कि फाटक चरचराने लगा। अब तो राजपूतोंमें खलबली मच गई और वे लोग फाटककी रक्षासे निराश होकर महलोंकी रक्षाका प्रबंध करने लगे।

फाटकको टूटा हुआ समझकर मुग़ल लोग आह्लादित हो रहे थे। वह उन्मत्त हाथी फाटकको तीसरे धक्केसे चूरचूर करना ही चाहता था कि इतनेमें एक वीर राजपूत एक रस्सीके सहारे हाथीके हौदेपर कूद पड़ा। उसने पहले ही महावतके सिरको धड़से जुदा करके जमीनपर गिरा दिया और फिर बड़ी फुरतीके साथ एक पैने कीलेको हथोड़ेकी चोटसे हाथीके मस्तकपर ठोक दिया। मस्तकमें कीला घुसते ही हाथी एकदम छटपटा गया। वीर हिम्मतसिंह अपना काम करके झटपट उसी रस्सीके सहारे ऊपर चढ़ गया। यह काम इतनी फुरतीके साथ हुआ कि मुगलोंको उसके रोकनेका मौका ही न मिला। हाथी बिलकुल बे-काम हो गया, और प्राण लेकर न जाने कहाँ भाग गया।

आधी रातका समय है। घोर सन्नाटा छाया हुआ है। एक तो यों ही अँधेरी रात्रि थी और उसपर बादल छाये हुए थे। अँधेरेकी सघनता इतनी बढ़ गई थी कि अपना हाथ फैलानेसे अपनेको भी न सूझता था। इस समय ५०० मुगल सैनिकोंको लिये हुए एक यवन सरदार धीरे धीरे जा रहा है और एक आदमी जो वेषसे हिन्दू जान पड़ता है उनको रास्ता बतलानेके लिए आगे आगे चल रहा है। कुछ समयमें ये लोग नदीकी चट्टानोंके पास जा पहुँचे। नदीके उसपार पत्थरोंकी एक खोंग बहुत सकरी होकर दूर तक चली गई थी। आगे आगे वह पथप्रदर्शक, पीछे कासिमखाँ सेनानायक और उसके पीछे उनके सब साथी एक एक करके उसमें होकर जाने लगे। दोनों ओर ऊँची ऊँची चट्टानें खड़ी थीं, बीचमेंसे केवल एक आदमीके जाने लायक मार्ग था। आगे चलकर एक बहुत ऊँची चट्टान, जो मार्गको रोके सीधी खड़ी थी, आ गई। उस चट्टानपर ऊपर चढ़नेके लिए कीले लगे हुए थे। ये लोग बहुत सावधानीके साथ एक एक करके उन कीलोंके सहारे ऊपर चढ़ने लगे और कुछ समयमें किलेकी दीवालसे सटी हुई चट्टानोंपर जा पहुँचे। अब कासिमखाँ पथप्रदर्शकको पीछे हटाकर और हाथमें नंगी तलवार लेकर अग्रसर हुआ। इस स्थानपर किलेकी दीवार इतनी नीची थी कि प्रत्येक मनुष्य थोड़ेसे ही प्रयत्नसे उसपर चढ़ सकता था। कासिमखाँ किलेकी दीवालपर पहुँचकर यहाँ वहाँ देखने लगा। वह सोचता था कि यदि कोई पहरेदार या रक्षक न देख पावे, तो हम लोग बड़ी आसानीसे महलोंपर कब्जा कर सकते हैं। वह सोच ही रहा था कि इतनेमें उसकी छातीपर किसी हथियारकी मूठका धक्का इतने जोरसे बैठा कि वह सँभल न सका और उस समय जो लोग किलेकी दीवालपर चढ रहे थे उनको भी अपने साथ लेता हुआ

पचासों हाथ नीचे आकर जमीन सूँघने लगा। इसी समय ऊपरसे बड़ी बड़ी शिलायें छोड़ी गईं, जिनसे बचे खुचे मुग़ल लोग टकराकर सैकड़ों फुट नीचे पत्थरोंपर आ गिरे। शिलाओंकी खड़खड़ाहट और गिरते हुए मुगलोंकी हाहाकार ध्वनिसे रात्रिकी निस्तब्धता सहसा भंग हो गई।

हिम्मतसिंहका नियम था कि वह रातके समय कई बार किलेकी चारों दीवारोंपर चक्कर लगाया करता था और पहरेवाले संतरियोंको सावधान कर आता था। उक्त घटनावाली रातको जब हिम्मतसिंह किलेकी उत्तर तरफकी दीवालपर टहल रहा था, उसी समय कासिमखाँ प्रकोटपर चढ़ रहा था। चढ़ते समय उसके पैरके नीचेसे अचानक एक पत्थरका टुकड़ा खसक पड़ा और उसके गिरनेकी आवाज़ सुनकर हिम्मतसिंह धीरे धीरे उसी ओरको चला गया। ज्यों ही उसने शत्रुको किलेकी दीवालपर खड़ा देखा, त्यों ही एक भालेकी चोटसे उसे नीचे गिरा दिया और ज़ोरसे सीटी बजाई। उसे सुनते ही कोई ५० राजपूत वहाँ आ पहुँचे और बड़े बड़े पत्थरोंको चट्टानोंपरसे किलेकी दीवारपर चढ़ते हुए मुग़लोंके ऊपर लुढ़काने लगे। नीचे मुर्दोंका ढेर लग गया। जीते मनुष्योंमें ऐसा एक भी आदमी न बचा जिसे भारी चोट न पहुँची हो और जिसका सिर न फट गया हो या हाथ पैर न टूट गया हो।

अभी तक राजपूतोंकी जीत ही जीत रही; मुगल सेना उनको किसी तरह नीचा नहीं दिखा सकी। परन्तु अब राजपूतोंको इस हालतमें अधिक दिनों तक रहना कठिन हो गया। धीरे धीरे किलेकी रसद ख़तम होने लगी। बाहरसे किसी तरह रसद आ ही नहीं सकती थी, इस कारण इन लोगोंके लिए यह बहुत बड़े संकटका समय था। इसी समय हिम्मतसिंहकी स्त्रीका एक पत्र आया। उसमें लिखा था—

"आप यथासंभव शीघ्र राजधानीको आइए । इस समय आपके पिताकी जान बड़ी जोखिममें है । पत्र पकड़े जानेके भयसे इससे अधिक मैं और कुछ नहीं लिख सकती हूँ ।" पत्र पढ़कर हिम्मतसिंहने अपने सब साथियों सहित अवसर पाकर किलेसे निकल भागने और राजधानी जाकर पिताकी सहायता करनेका विचार स्थिर कर लिया ।

इधर कई दिनसे मुगल-सेना एक धूलिकोट बनानेमें व्यस्त है । अब उसने एक बहुत बड़ा धूलिकोट बनाकर उसके सहारे हमला करना सोचा है । उनका लक्ष्य और सब ओरसे हटकर केवल इसी ओर लग रहा है । उनको भय है कि कहीं कठसोईके समान किसी समय मौका पाकर राजपूत लोग उसे नष्ट न कर दें । इसलिए उन्होंने अपनी अधिकांश फौज धूलिकोटके आसपास मोरचाबंदीसे लगा रक्खी है । इसी समय एक अँधेरी रातमें जब कि आकाश एक छोरसे दूसरे छोर तक काले काले मेघोंसे आच्छादित हो रहा था, हिम्मतसिंह अपने साथियों सहित उसी मार्गसे—जिससे कासिमखाँ उस रातको किलेमें घुसना चाहता था—बाहर हो गया । यदि इस समय बिजली न चमकती तो मुगलोंको मालूम भी न होता कि वे कब निकल गये; परन्तु बिजलीके प्रकाशमें इन लोगोंको जाते हुए देखकर पहरेवालोंने बिगुल बजा दी। बिगुलका शब्द सुनते ही मुगल-सेनामें खलबली पड़ गई, और सब लोग एकदम धूलिकोटकी ओर दौड़ने लगे, क्योंकि सैनिकोंको पहलेसे सूचना कर दी गई थी कि राजपूत लोग संभवतः धूलिकोटको नष्ट करनेकी चेष्टा करेंगे; इसलिए रातको सब लोग बहुत सावधानीसे रहना । अवसर आते ही बिगुल बजाई जावेगी, उसे सुनकर तुम लोग तत्काल ही धूलिकोटकी रक्षाके लिए उपस्थित हो जाना । आखिर यही हुआ और हिम्मतसिंहको जल्दीसे निकल भागनेका एक अच्छा मौका मिल गया ।

किलेसे निकलकर ये लोग बीचकी भूमिको पार करके अपने देशकी सीमामें जा पहुँचे। उन्होंने मातृभूमिकी उस पवित्र धूलिको अत्यंत श्रद्धा और भक्तिके साथ माथेमें लगाकर उसको मन-ही-मन प्रणाम किया। इसी समय राजधानीसे एक सवार अपने घोड़ेको बड़े वेगसे दौड़ाता हुआ आता दिखाई दिया। वह छिपकर जाना चाहता था, परन्तु उस जगह रास्ता ऐसा तंग था कि उसे लाचार होकर इन लोगोंके बीचसे होकर जाना पड़ा। अकस्मात् राजकुमार हिम्मतसिंहको देखते ही वह भी घोड़ेसे कूद पड़ा और उसने अपनी कमरसे एक चिट्ठी निकालकर उनके हाथमें दे दी। पत्र हिम्मतसिंहकी स्त्रीका भेजा हुआ था। उसमें लिखा था—“आपके पिताजी शीघ्र ही सूजाबाई और बाप्पालालके साथ वसंत-महलको जानेवाले हैं। मैं जहाँ तक समझती हूँ, वहाँपर उनका जाना बहुत जोखिमका है। यदि आप शीघ्र ही आकर उनकी रक्षा न करेंगे, तो शायद फिर आप उनके दर्शन न कर सकेंगे।”

इस हृदयविदारक समाचारको पढ़कर हिम्मतसिंह व्याकुल हो गये और उन्होंने शीघ्र ही वसंत-महलको जाना निश्चय कर लिया। हिम्मतसिंह और उनके साथी किलेकी चट्टानोंवाली दीवालको लाँघ कर आये थे, इसलिए वे अपने साथ घोड़ोंको न ला सके थे। अतः हिम्मतसिंहने उस पत्र लानेवाले सवारके घोड़ेपर ही आरूढ़ होकर वसंतमहलकी ओर प्रस्थान किया।

लगातार पाँच छः घण्टेकी दौड़के पश्चात् हिम्मतसिंहको अपने प्रिय पिताके महलोंका कलसा दिखाई दिया। वह सहसा रुक गया। उसने सोचा कि मुझे देशनिकालेका दंड दिया गया था; यदि मैं प्रकट-रूपसे नगरमें जाऊँगा तो संभव है कि पकड़ा जाऊँ या जन्मकैद

किया जाऊँ और यदि ऐसा हुआ तो मैं पिताका हित-साधन न कर सकूँगा। इसलिए छिप करके ही जाना अच्छा है। उस समय दो घड़ी दिन बाकी था, इसलिए वह रात होनेकी प्रतीक्षा करने लगा। रात होते ही घोड़ेको नगरके बाहर एक पेड़से बाँधकर, वह एक पगदंडीसे राज-महलकी ओर अग्रसर हुआ और उस अँधेरी रातमें वह सबकी आँख बचाता हुआ किसी तरह महलके पिछले हिस्सेकी दीवारके पास जा पहुँचा और एक खुली हुई खिड़कीमेंसे भीतरका दृश्य देखने लगा। उसने देखा कि पिताजी और बाप्पालाल दोनों ब्यालू कर रहे हैं। बीच बीचमें मनोरंजन वार्तालाप भी होता जाता है। सूजाबाई सामने बैठी हुई पंखा झल रही है। सूजाबाईके सिरपर जड़ाऊ मणियोंकी सिरज़ेब चमक रही है, और कानोंमें भी रत्नजटित कर्णफूल दमक रहे हैं। उसकी भड़कीली रेशमी साड़ी उसकी शोभाको दूनी कर रही है। पर हिम्मतसिंहको उसकी साड़ीकी नीले रंगकी चार धारियाँ उसके बदनमें लिपटीं हुई चार नागिनोंके समान मालूम पड़ती थीं। मानों वे उसके पिताको डसनेके लिए ऐंठ रहीं हों।

ब्यालू हो चुकनेपर सूजाबाई पतिके पाससे उठ कर एक कमरेमें चली गई और वहाँसे एक ग्लासमें शरबत तैयार कर ले आई। उसने शरबतमें अपनी साड़ीके छोरसे एक काग़ज़की पुड़िया निकाल कर हिला दी थी। ग्लासको लाकर उसने राजाके हाथमें दे दिंया। हिम्मत-सिंहकी आँखोंके सामने अँधेरा छा गया। कुछ समय तक वह निश्चल खड़ा रहा और फिर एकाएक खिड़कीकी राहसे भीतर उन लोगोंके सामने जा खड़ा हुआ।

उसे देखते ही राजा चौंक पड़ा और उसने अपनी रक्षाके लिए पहरेदारोंको पुकारा। फिर उसने हिम्मतसिंहकी ओर देखकर कहा—

"हिम्मत ! तू मेरी आज्ञाका उल्लंघन करके यहाँ कैसे आ गया ? क्या तू इस निर्जनतामें मेरा वध करना चाहता है ? तू मेरा पुत्र नहीं शत्रु है। देख तेरी इस नीचताका बदला मैं अभी देता हूँ, तैयार रह।" हिम्मतसिंहने शांत भावसे कहा—"पिताजी, आप धैर्य रखिए, मैं आपका शत्रु नहीं, चरणोंका दास हूँ। कौन शत्रु है और कौन मित्र है, इसका निर्णय अभी हुआ जाता है। आप इस शरबतको स्वतः न पीकर बाप्पालालको दे दीजिए; बस इसी एक बातसे शत्रु-मित्रका निर्णय हो जावेगा।" सूजाबाईका चेहरा सूख गया। वह घबड़ा गई और मूर्छित होकर गिर पड़ी। बाप्पालाल डरके मारे, किसीने देख भी न पाया कि कब, भाग गया। इस घटनासे राजाके विस्मयका पार नहीं रहा।

राजाका माथा घूमने लगा। जो सूजाबाई एक घड़ी पहले राजाको प्राणोंसे भी प्रिय थी वह उनको अब कराल सर्पिणीके समान ज्ञात होने लगी। राजाने उठकर हिम्मतसिंहको गले लगा लिया। दोनोंकी आँखोंसे अश्रु गिरने लगे। राजा सोचता था कि हाय ! मैंने इस पिशाचिनीके मोहमें फँसकर——इसके कपट-कौशलको न समझकर——ऐसे पितृभक्त पुत्रको देश-निकाला दे दिया ! सूजाबाईकी अपने पुत्रको शीघ्र ही राजसिंहासनपर बिठलानेकी इच्छा पूर्ण न हुई। वह कैद करके कारागारमें डाल दी गई।

प्रातःकाल नगर भरमें मुनादी पिटवा दी गई—"राजकुमार हिम्मतसिंहके देश-निकालेकी आज्ञा रद्द की गई और अमुक तिथिको युवराज बनानेके लिए उसका अभिषेक किया जावेगा।" इस समाचारको सुन कर नगरभरमें प्रसन्नता फैल गई। लोगोंने नगरको सजाकर खूब उत्सव मनाया। हिम्मतसिंहका यश मुगलोंपर विजय पाने और पिताके प्राण बचानेके कारण दूर दूरतक फैल गया।

पद्मिनी।



प्रातःकालका समय है। अरावली पहाड़की तलहटीमें हरी भरी दूबासे भरा हुआ एक भारी मैदान है। भगवान् सूर्यदेवकी सुनहरी किरणें उसकी शोभाको चौगुना कर रही हैं। इसी मैदानसे लगा हुआ एक घनी झाड़ियोंका जंगल है। ऐसे मनोहर समयमें उस जगह एक सुन्दर और वीर अश्वारोही युवक टहल रहा है। वह शिकारी पोशाकमें है और एक हाथमें भाला लिये हुए घोड़ेको धीरे धीरे चलाता हुआ चारों ओर दृष्टि फेंक रहा है। उसके शारीरिक गठन और मुखके तेजसे प्रकट होता है कि वह राजपूत है। धीरे धीरे समय बीतने लगा। धूप तेज हो गई। राजपूत युवक अशाभरी दृष्टिसे शिकारकी खोज करने लगा। अन्तमें बहुत दूर एक बड़े पाषाणकी ओटमें एक सुअर दिखाई दिया। सुअर बड़ा भयानक और क्रोधी जानवर होता है। और और जानवरोंकी अपेक्षा इसका शिकार करना बहुत साहस और जोखिमका काम है। इसके सिवा वहाँकी भूमि विषम, पथरीली और वृक्षोंसे परिपूर्ण थी, इस कारण उसपर हमला करना बहुत कठिन था। पर इन कठिनाइयोंका विचार न करके राजपूत युवक अनेक पत्थरों और झाड़ियोंकी ओटमें होता हुआ सुअरके समीप जा पहुँचा। कुछ समय देख भाल करके उसने घोड़ेको एड़ लगाकर सुअरके पंजेमें भाला भोंक दिया। दुर्भाग्यवश उसी समय घोड़ेका पैर एक गर्तमें घुस गया और घोड़ा तथा सवार दोनों जमीनपर जा रहे। इस घटनासे भाला टूटकर दो टुकड़े हो गया; आधा सुअरकी पसलियोंमें बिध गया

और आधा युवकके हाथमें रह गया। घायल जानवर बड़ा ही भयानक होता है—वह क्रोधसे पागल होकर उसकी ओर झपटा। यह देखकर युवक फुरतीसे उठकर खड़ा हो गया और झटसे बगलमें लटकती हुई तलवारको निकाल कर अपनी रक्षा करने लगा। परन्तु सुअरकी वज्रके समान खीसोंके सामने तलवार कोई चीज़ न थी। माळूम होता था कि वह एक ही बारमें युवकको चीर फाड़ कर दो किये देता है। युवक अपनी रक्षाका और कोई उपाय न देख तलवारसे बचाव करने लगा। सुअर अपनी कठोर खीसोंसे युवकको धराशायी करना ही चाहता था कि इतनेमें सहसा सन्‌सन् करता हुआ एक बाण आया और सुअरके कलेजेमें घुस गया।

इस तरह इस भयानक आपत्तिसे बचकर युवक चकित होकर चारों ओर अपनी प्राणरक्षा करनेवालेको देखने लगा। उसे उस घने जंगलमें एक मनोहर मानवी मूर्त्ति दिखाई दी। भलीभाँति देखनेपर माळूम हुआ कि वह एक अरबी घोड़ेपर बैठी हुई एक षोडशवर्षीया बालिका है। उसके एक हाथमें घोड़ेकी बाग और दूसरेमें कमान शोभा दे रही है।

युवक यदि यूनानी होता तो वह यही समझता कि अपने जनकी रक्षा करनेके हेतु ओलम्पियसकी भेजी हुई देवी डायनाने दर्शन दिये हैं। उस नववयस्का सुंदरीके मुखमंडलकी आभा परम मनोहर और अद्वितीय थी। जंगलकी खुली और निर्मल हवामें रहनेके कारण उसका स्वास्थ्य अंतःपुरमें रहनेवाली सुकुमारियोंसे कहीं अच्छा था। इस समय तेज धूपके कारण यद्यपि उसका मुख विवर्ण हो रहा था और उसपर पसीनेके बिन्दु छाये हुए थे, तो भी युवकको वह वीर मूर्ति अत्यन्त सौन्दर्यपूर्ण और प्रभावशालिनी प्रतीत हुई। सच तो यह है कि ऐसी वीरश्री-

सम्पन्न नारीमूर्ति युवकने कभी अपनी आँखोंसे न देखी थी। जब तक उसने अपने चकित चित्तको सँभाला, तब तक वह वीर मूर्ति उसी सघन जंगलमें न जाने कहाँ लुप्त हो गई ! अपने पैरोंके पास बाणविद्ध बाराहको पड़ा देखकर युवकको यह विचित्र घटना स्वप्नके समान भासित होने लगी।

सूर्य भगवान् मध्याह्नमें पहुँचकर अग्निवर्षा कर रहे हैं—धूप बहुत तेज हो रही है। प्रतापसिंह भूख और प्यासके मारे व्याकुल हो रहे हैं। बाराहसे बच जाने और अपने प्राण बचानेवाली उस रमणी मूर्तिके स्मरणसे रह रहकर उनके मनमें तरह तरहके भाव उठ रहे थे। अंतमें उन्होंने एक पगडंडी मार्गसे—जो अनुमानसे किसी बस्तीको गया जान पड़ता था—चलना प्रारंभ किया। किन्तु उनका वह अनुमान सच न निकला; ज्यों ज्यों वे आगे बढ़ने लगे त्यों त्यों उन्हें घना जंगल मिलने लगा। अंतमें उन्हें उस सघन वनके बीचमें एक पर्णकुटी दिखाई दी। पास पहुँचनेपर ज्ञात हुआ कि वह वीर अजीतसिंहका निवासस्थान है। अफगान दाऊदखाँसे पराजित होनेके बाद वे अपने परिवारसहित इसी वनमें रहकर अपने दिन व्यतीत किया करते हैं।

अजीतसिंहने नवागत व्यक्तिका स्वागत किया।

जलपान करनेके बाद प्रतापसिंहने अपना परिचय देकर घटनाका सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उन्होंने अपनी प्राणरक्षा करनेवाली उस वीर रमणीकी प्रशंसा करके उसका परिचय पानेकी उत्कंठा प्रकट की।

अजीतसिंहने उत्तर दिया—बहुत करके वह मेरी विक्षिप्त कन्या पद्मिनी ही होगी। दाऊदखाँसे पराजित होकर जबसे मैं इस वनमें आया हूँ, तबसे वह इसी तरह धनुर्बाण हाथमें लिए हुए जंगल पहाड़ोंमें जहाँ

इच्छा होती है वहाँ घूमा करती है। अब वह स्यानी हो गई है, इस कारण उसके विवाहकी मुझे बड़ी चिन्ता है। परन्तु उसने जो प्रण किया है वह बहुत ही कठिन है। वह कहती है कि जबतक मेरे पिताका खोया हुआ राज्य न लौटेगा तबतक मैं ब्याह न करूँगी। इसका मुझे बड़ा दुःख है। यदि आज मेरी रगोंमें जवानीका खून होता, तो मैं सब कुछ कर सकता था; परन्तु अब यह बुढ़ापेका शरीर काम नहीं देता। इस शरीरसे राज्य लौट नहीं सकता और कन्या सदा कुमारी रक्खी नहीं जा सकती। बड़ी ही कठिनाईमें पड़ा हूँ—कुछ उपाय नहीं सूझता।

प्रतापसिंहने कहा--"मैं शपथपूर्वक कहता हूँ कि या तो मैं दाऊदको पराजित करके राजगढ़का महल आपको लौटा दूँगा या इसी प्रयत्नमें मैं अपने प्राण दे दूँगा। आशा है कि आप मेरी इस तुच्छ सेवाको स्वीकार करेंगे। आपकी बेटीने मुझे आज प्राणदान दिया है, अतः उसको सुखी करनेके लिए और साथ ही आप जैसे वृद्ध वीरको इस कठिनाईके समय सहायता देनेके लिए मैं सर्वथा प्रस्तुत हूँ।" अजीतसिंह कृतज्ञता भरी दृष्टिसे उस युवाके मुँहकी ओर देखने लगे।

सन्ध्या होनेमें कुछ ही कसर है। अजीतसिंह अपनी पर्णकुटीके सामने मैदानमें टहल रहे हैं। इतनेमें दूरसे घोड़ेकी टापोंका शब्द सुनाई दिया। क्रमशः आवाज और भी समीपवर्ती होने लगी। थोड़ी ही देरमें एक मुसलमान सवारने आकर अजीतसिंहको सलाम करके उनके हाथमें एक चिट्ठी रख दी। चिट्ठी पढ़ते ही अजीतसिंहका चेहरा क्रोधसे तमतमा उठा। परन्तु उस समय न मालूम क्या सोचकर उन्होंने अपने क्रोधको दबा लिया। आज पद्मिनीकी सगाईकी चर्चा एक ऐसी जगहसे

आई है जिसकी कभी कल्पना भी न की गई थी । पद्मिनीकी रूप-राशिकी चर्चा दाऊदखाँके कानोंतक पहुँच गई थी । यद्यपि इस समय उसकी उमर ढल चुकी थी और जनानखानेमें उसकी दो मुसलमान स्त्रियाँ भी मौजूद थीं, तो भी वह इस रूपवती राजपूत-रमणीकी सुन्दरताको सुनकर उसे अपनी बेगम बनानेकी इच्छाको न रोक सका । अस्तु, उसने अपने एक विश्वासपात्र दूतके द्वारा अजीतसिंहके पास पत्र भेजकर अपनी इच्छा—नहीं नहीं आज्ञा—प्रकट की । पत्रमें लिखा था—

"प्यारी पद्मिनी—जिसका चेहरा चाँदकी तरह, आँखें सितारोंकी तरह, दाँत मोतियोंकी मालाकी तरह हैं और जिसकी रूपराशिसे भीनी भीनी कपूरकी सी खुशबू निकलती है, ज्यादह क्या लिखूँ जो हर फनमें होशयार और हरिणके बच्चेकी तरह भोली भाली है—वह आजसे इस दिलकी मालकिन करार दी जा चुकी है । लिहाजा उसे यहाँ भेज दो और उसे इस सल्तनतकी मालकिन बनने दो ।" इन चार छः पंक्तियोंके अतिरिक्त सारा पत्र धमकियोंसे भरा हुआ था । अंतमें उसने लिखा था कि "यदि इस हुक्मकी तामीली न करके शाही इज्जतकी तौहीनी की गई, तो बस फिर अपना अंत ही समझो; शाही फौज आकर जबर्दस्ती पद्मिनीको ले जायगी ।"

अजीतसिंह, प्रतापसिंह और पद्मिनीकी इस विषयमें कुछ समयतक बातचीत होती रही, अंतमें उन तीनोंका मत एक हो गया । अजीतसिंहने पत्रोत्तरमें लिख दिया कि एक महीनेके बाद आपके हुक्मकी तामीली की जायगी । उसको किसी तरहका सन्देह न हो, इसलिए यह भी लिख दिया कि मुझे राजगढ़ राजधानीका एक अंश इनामके तौरपर मिलना चाहिए । दाऊदखाँ तो पद्मिनीके सौन्दर्यपर लट्टू हो रहा था,

इसलिए उसने अजीतसिंहकी दोनों बातें मान लीं। बिना झगड़ा फसादके ही मामला तय हो गया, यह जानकर दाऊदखाँको बड़ा संतोष हुआ।

एक महीना बीत गया। कुछ घुड़सवारोंके बीच एक पालकी राजगढ़की ओर जा रही है। इस पालकीमें और कोई नहीं, हमारे पाठकोंकी परिचित पद्मिनी ही है। पालकीपर रेशमकी झूलें पड़ी हुई थीं। पालकीके पीछे पीछे पद्मिनीका शानदार अरबी घोड़ा एक साईस लिये जा रहा है—जो वास्तवमें वीर प्रतापसिंह था। बीचवाली पालकीके आगे पीछे तीन तीन पालकी और भी थीं। जाना जाता था कि उनमें उनकी सखी सहेलियाँ होंगी, परन्तु वास्तवमें उनमें ६ राजपूत वीर तीरों, तलवारों और भालोंको छुपाये हुए बैठे थे। इनके सिवाय हरएक पालकीके वाहक छः छः मनुष्य थे, जो कहार नहीं वरन् छद्मवेषधारी राजपूत थे। गरज यह कि पद्मिनी अकेली न थी; उसके साथ उक्त ४९ वीरोंकी एक छोटीसी गुप्त सेना भी थी। सिवा इसके पद्मिनीकी रक्षाके लिए ३० सशस्त्र घुड़सवार भी आगे पीछे जा रहे थे। ये तीसों सवार दो दो तलवारें बाँधे हुए थे। उस समयकी प्रथाके अनुसार इनपर किसीको कुछ सन्देह नहीं हो सकता था। क्योंकि राजघरानेकी स्त्रियोंकी रक्षा और सन्मानके लिए कुछ रक्षकोंका उनके साथ होना जरूरी समझा जाता था।

इधर राजमहलसे एक दो मील आगे दाऊदखाँ अपने सुजन, संबंधी और मित्रोंके साथ आकर पेशवाईके लिए खड़ा था। सब लोग बड़े बड़े घोड़ोंपर चढ़े और सुन्दर वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित थे। दाऊदखाँ स्वतः खूब बन ठन कर आया था। बुढ़ापेकी झलक छिपानेके लिए चमकीली रेशमी पोशाक बहुत सँभालकर की गई थी।

नवदुलहिनकी आगमनीके लिए राजगढ़का फाटक खूब सजाया गया था। पालकी उतार दी गई। दाऊदखाँ पद्मिनीसे मिलनेकी खुशीमें अपनेको भूला हुआ था। थोड़ी ही देरमें दृश्य तबदील हो गया। पद्मिनी पालकीमेंसे निकलकर शीघ्र ही अपने घोड़ेपर सवार हो गई। कहारोंने भी बातकी बातमें वेष बदल लिया और सवारोंसे एक एक तलवार ले ली। अन्य वीर भी अपने अपने हथियार लगाकर तैयार हो गये और वीर प्रतापसिंह इस छोटीसी सेनाका संचालक बन गया। यह दृश्य देखते ही कुछ समयके लिए दाऊदखाँ किंकर्तव्यविमूढ़ होकर पत्थरकी मूर्तिके समान खड़ा हो रहा। थोड़ी देरमें जब उसकी तंद्रा खुली तब उसने अपने साथी सवारोंको सचेत करनेके लिए बिगुल बजाया।

सबसे पहले कन्याने ही वरपर पुष्पवृष्टि की! पद्मिनीके बाणसे दाऊदखाँका घोड़ा घायल होकर जमीनपर गिर पड़ा। दाऊदखाँने बहुत होशियारी की; परन्तु वह सँभल न सका और जमीनपर जा गिरा। वह शीघ्र ही धूल झाड़ता हुआ उठ बैठा। उसने देखा कि चारों ओरसे तीर और भाले आकर उसके साथियों और रक्षकोंको जमीनपर गिरा रहे हैं। वह अपने प्राणोंका मोह छोड़कर शीघ्र ही फाटकको बंद कर देनेकी चेष्टा करने लगा, पर उसे सफलता न हुई। दो तीन दिन पहलेसे जो सैकड़ों राजपूत राजगढ़में आ गये थे और इस समय विवाहका जुलूस देखनेके लिए दर्शकोंके रूपमें उपस्थित थे, वे भी अवसर पाकर उनमें सम्मिलित हो गये और राजपूतोंकी सहायता करने लगे। दाऊदखाँके हजार प्रयत्न करनेपर भी राजपूत लोग फाटकके भीतर घुस गये। उधर प्रतापसिंह पद्मिनीकी रक्षाके लिए प्राणपणसे चेष्टा कर रहा था। राजपूतोंके बीच पद्मिनीका हस्तकौशल भी अपूर्व और प्रशंसनीय था। जिसको वह अपने बाणका लक्ष्य बनाती थी, वह उसी समय धराशायी

हो जाता था। दाऊदखाँ भी बहुत कौशलके साथ इनका मुकाबला कर रहा था। प्रतापसिंहने दाऊदखाँको आते देखकर घोड़ेकी आसनसे एक ओर झुक कर उसके वारको खाली जाने दिया और उसी समय उसकी कमरमें हाथ डालकर उसे नीचे गिरा दिया। नींचे गिरते ही राजपूतोंने उसे बंदी कर लिया। दाऊदखाँको शत्रुओंके पंजेमें देखकर उसके शेष साथियोंने भी अपने हथियार रख दिये। वीर प्रतापसिंहने शत्रुओंको शरणागत समझकर उनको क्षमा कर दिया। दाऊदखाँ पराजित होकर बहुत दुःखी हुआ, वह प्रतापसिंहसे क्षमा माँगकर द्वेष, अभिमान और ग्लानिसे दुःखित होता हुआ चला गया। उसने मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि एक न एक दिन पद्मिनीको बेगम बनाकर ही छोडूँगा; परन्तु उसकी वह प्रतिज्ञा पूरी नहीं हुई। पद्मिनीकी वरमाला प्रतापसिंहके ही गलेमें पड़ी और सदाके लिए प्रतापसिंह ही उसका स्वामी हुआ।



कमलावती ।



चम्बल नदीके किनारे प्रकोट-परिवेष्टित 'नाहरगढ़' नामका नगर है। नदीकी एक शाखा आधे नगरको अर्धचन्द्राकार घेरती हुई बहती थी। सुदृढ़ राजमहल किलेके भीतर बना था। महलोंके चारों ओर एक ऊँची प्राचीर थी। नदीकी तरह यह प्राचीर भी नगरकोटसे जाकर मिल गई थी। महलोंके पिछले हिस्सेमें अंतःपुर था। अंतःपुर-निवासिनी राजस्त्रियाँ अपने महलोंपरसे नदीपारके विस्तृत मैदान और क्षितिजके सौन्दर्य्यका अवलोकन किया करतीं थीं।

आजसे लगभग चार सौ वर्ष पहलेकी बात है। ज्येष्ठकी अमावास्याकी रात्रि थी। संध्या हुए एक पहर हो चुका था। राजकुमारी कमलावती अपने शयनगृहकी खिड़कीसे अंधकारमय रात्रिके नक्षत्रपूर्ण आकाशमंडलकी अपूर्व शोभा देख रही थी। नदीके पासवाले मैदानमें कई जगह आगकी चमक दिखाई देती थी। सन् सन् करती हुई हवा चल रही थी। वह चमक क्या है, इसका कुछ विचार किये विना ही राजकुमारी अपनी शय्यापर जाकर सो रही। उसे इस बातकी खबर ही न थी कि उस चमकका मूल कारण मैं स्वयं हूँ।

* * * *

घोर अँधेरा छाया है, रातके ९ बज चुके हैं। नदी किनारे मुसलमान सिपाहियोंकी सेना चुपचाप पड़ी हुई अर्ध रात्रिकी प्रतीक्षा कर रही है। सेनानायक और सेनाके कुछ अफसर एक जगह बैठे हुए कुछ सलाह कर रहे हैं। बीचमें कई हुक्के रक्खे हुए हैं। अमावास्याके सघन

अंधकारमें चिलमोंकी लौ दूरसे चमकती हुई दिखाई देती है। वहाँसे नदीके इस पारका एक भव्य भवन दिखाई दे रहा है। मुसलमान सेना आज इसी राजमहलपर धावा करनेवाली है। कमलावतीके रूपकी प्रशंसा सुनकर फतहजंग उससे विवाह करना चाहता था। इसी उद्देश्यकी सिद्धिके लिए आज वह सेना लेकर यहाँ आया है। सिपाही लोग भी उत्साहित हो रहे हैं। उन्होंने सुना था कि राजमहलके समीप जो मंदिर है उसमें अपार धन-रत्न और सैकड़ों रत्नजटित स्वर्णमूर्तियाँ हैं। उनको लूटने और मूर्तियोंके नष्ट-भ्रष्ट करनेका मजहबी जोश ही उनके उत्साहका कारण था।

ये लोग ऐसी सावधानीके साथ आये थे कि किसीको इनका आना विदित ही न हुआ था। जो एक दो आदमी रास्तेमें मिले वे एकदम क़त्ल कर दिये गये; क्योंकि वे जानते थे कि यदि जरा भी खबर पड़ जायगी तो सब काम बिगड़ जायगा और लेनेके देने पड़ जायँगे।

धीरे धीरे रात्रि गंभीर हो गई। चारों ओर अखंड निस्तब्धता फैल गई। फतहजंगने सीटी देकर सबको सचेत कर दिया। महलपर चढ़नेका प्रयत्न शुरू हो गया। इन लोगोंके साथ कई नसैनियाँ थी; उन्हींके सहारे एक एक करके सिपाही लोग प्रकोटपर चढ़ने लगे। सबसे पहले प्रकोटपर पहुँचनेवाला स्वतः फतहजंग था। फतहजंग धीरे धीरे महलकी ओर जाने लगा। फाटकपर उसने पहरेदारको एक ही हाथमें साफ कर दिया। आहट पाकर किलेके और कई पहरेदार आ पहुँचे; परन्तु इस समय फतहजंगके बहुतेरे सिपाही भीतर घुस आये थे, इसलिए वे भी उनके हाथसे मारे गये। महलमें कोलाहल मच गया, घंटी बजाई गई। इस समय सभी राजपूत सिपाही निश्चिन्त सो रहे थे; घंटीकी आवाज

सुनते ही घबड़ाकर उठ बैठे और विपत्ति आई जानकर झटपट अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित होकर मौकेपर जा पहुँचे। परन्तु इस समय २००० मुसलमान सिपाही महलके आँगनमें घुस आये थे। युद्ध होने लगा। मुसलमान लोग संख्यामें कम थे, परन्तु वे मोरचाबंदी कर चुके थे, इस कारण राजपूतोंकी मारका उनपर कुछ प्रभाव न पड़ा।

इतनेमें एक राजपूतोंका दल जिसका नायक एक ऊँचा और सुन्दर युवा था अंत:पुरकी ओर झपटा और रंगमहलमें जानेवाले रास्तेको रोककर खड़ा हो गया। राजमहलकी छत और दीवारोंमें काच जड़ा हुआ था; जिससे भागने और खदेड़नेवाले दोनों दलोंकी संख्या मूल संख्यासे कई गुनी दिखाई दे रही थी। इसमें मुसलमानोंको एक तरहका भ्रमसा होने लगा; परन्तु वे हटे नहीं—भीतर भी मारकाट होने लगी। राजभवनका सफेद फर्श राजपूत और मुसलमानोंके रक्तसे लाल हो गया।

इधर मुसलमानोंका एक दल रुक्मिणी-रमणके मन्दिरमें घुस गया। वह वहाँके पुजारियोंको मारकर मूर्तियोंको तोड़ने फोड़ने और धन-दौलतको लूटने लगा। उसने मूर्तियोंके आभूषण, उनमें जड़े हुए रत्न और अन्य सहस्रों रुपयोंकी चीजें एक एक करके लूट लीं। केवल इतना ही नहीं, उसने न जाने कितना बहुमूल्य सामान तोड़-फोड़कर नष्ट कर दिया। खंभे, चौखटें, आलमारियाँ आदि सभी दर्शनीय और सुन्दर चीजें नष्ट-भ्रष्ट हो गईं।

फतहजंगका तीसरा दल अन्त:पुरकी ओर अग्रेसर हो रहा था, परन्तु वह आगे न बढ़ सका। ज्यों ही वे लोग जीनेपरसे ऊपर चढ़ने लगे, त्यों ही राजपूत दलने उनपर इस जोरसे आक्रमण किया कि वे तितर बितर हो गये। कई लोग जो जीनेपर चढ़ रहे थे, नीचे

गिर गये और अधिकांश राजपूतोंकी तलवारोंसे मारे गये। उन्हें लाचार होकर पीछे हटना पड़ा।

अन्तःपुरवाले दलको छोड़कर मुसलमानोंके शेष दोनों दल अपना काम मुस्तैदीके साथ कर रहे थे। मन्दिरकी लूटसे असंख्य धन-रत्न भी उनके हाथ लग चुका था, पर इससे फतहजंग प्रसन्न न था। जिस अन्तःपुरमें उसका वाञ्छित रमणी-रत्न सुरक्षित था, उस ओर आगे न बढ़ सकनेके कारण उसे बड़ी निराशा हुई। इधर बाहर राजपूतोंका जोर भी बढ़ गया था, इस कारण आगे अब सफलताके लक्षण भी नहीं दिखाई देते थे। अतएव उसने अपने सिपाहियोंको जिस मार्गसे वे आये थे उसी मार्गसे लौट जानेकी आज्ञा दे दी। दुर्दैववशात् जब ये लोग नदी-किनारे प्रकोटके समीप पहुँचे तब उन्होंने देखा कि नसेनियोंकी रक्षाके लिए जो दल छोड़ा गया था राजपूतोंने उसे नष्ट कर दिया है और नसेनियाँ तोड़-ताड़ कर नदीमें डाल दी गई हैं। इस तरह जब अपने निकलनेका रास्ता एकदम बन्द देखा तब उन्होंने सोचा कि अब मरना तो है ही, फिर अपना वीरत्व दिखलाकर ही क्यों न मरें? अतएव उन्होंने महलपर फिर आक्रमण किया। इस वार वे जीनेकी आशा छोड़कर बड़ी तेजीसे लड़ने लगे।

कोटके चारों ओर असंख्य राजपूत मुसलमानी सेनाको घेरे हुए खड़े थे। राजपूतोंका एक बड़ा दल फाटकपर भी आ डटा था; परन्तु अन्तः-पुरकी रक्षाके लिए उस नव युवकके दलके कुछ वीरोंके सिवा और कोई साधन न था। इस प्रकार मुसलमान लोग परिवेष्टक और परिवेष्टित दोनों थे। अर्थात् अन्तःपुरको मुसलमानोंने घेर रक्खा था और राजमहलके प्रकोटको राजपूतोंने। इधर अन्तःपुरकी रक्षाका यथेष्ट प्रबन्ध न होनेके कारण

राजपूतोंको बड़ा भय था कि कहीं ये लोग अन्तःपुरमें न घुस जावें । उधर चारों ओरसे घिर जानेके कारण मुसलमानोंको भी चैन नहीं थी । राजपूतोंको और तो कुछ भय नहीं था--वे कालसे भी डरनेवाले नहीं थे—उन्हें चिन्ता थी तो केवल राजस्त्रियोंकी सम्मान-रक्षाकी । अतएव उन्होंने फतहजंगके पास संदेशा भेजा कि "यदि तुम हथियार रख दोगे तो तुम लोगोंको निकालनेके लिए रास्ता दे दिया जायगा और तुम्हारे साथ युद्ध न किया जायगा ।" फतहजंग बहुत चालाक था । उसने ताड़ लिया कि यदि अन्तःपुर हम लोगोंके हाथमें न होता, तो राजपूत लोग सहज ही मामला तय करनेको कभी तैयार न होते । अतएव उसने दूतसे इन सब बातोंको समझाकर कहा कि "यदि हम लोगोंको सशस्त्र नीला झंडा उड़ाते हुए बे-रोकटोक निकल जाने दो और राजकुमारी कमलावतीको हमारे साथ भेजना स्वीकार करो, तो हम अन्तःपुरका घेरा उठानेको तैयार हैं । क्योंकि कमलावतीको ले जाना हमारा प्रधान उद्देश्य है । यदि सुलह करके वे लोग इस कामको करना चाहें तो मैं भी यही चाहता हूँ; अन्यथा हमारी नई फौज आनेपर हम नाहरगढ़के राजमहल और सारे शहरको नेस्त-नाबूद करके कमलावतीको ले जायँगे ।" फतहजंगने सोचा यदि इस तरहकी घुड़कीसे काम निकल जाय तो अच्छा है, नहीं तो अन्तमें राजपूतोंसे सुलह तो करनी ही होगी । क्योंकि हम लोग चारों ओरसे घिरे हुए हैं—दो चार दिनमें ही भूख प्याससे मर जावेंगे । पर राजपूत लोग ऐसी सन्धि कब करनेवाले थे ? ऐसे प्रस्तावका सुनना भी वे पाप समझते थे । अन्तमें फतहजंगने कमलावतीकी आशाको परित्याग करके यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि "राजपूतोंमेंसे कोई एक आदमी तलवार लेकर मेरे साथ द्वन्द्व-युद्ध करे । यदि मैं जीत जाऊँगा, तो हथियारबंदीके साथ फतहका झंडा उड़ाता हुआ नाहरगढ़की सीमासे

बाहर निकल जाऊँगा और साथमें लूटका माल भी लेता जाऊँगा। यदि हार गया तो लूटका माल और हथियार दोनों रखकर खाली हाथ चला जाऊँगा। दोनोंमेंसे जो जीतेगा वह विजित व्यक्तिका कवच विजयचिह्न स्वरूप ले लेगा।" यह बात राजपूतोंको भी पसन्द आ गई और परस्पर शपथ होकर मामला तय हो गया।

राजपूतोंकी ओरसे द्वन्द्व-युद्धके लिए कौन तैयार होता है—इसका चुनाव होने लगा। अनेक राजपूत वीरोंने इस युद्धके लिए अपनी इच्छा प्रकट की; परन्तु उनमेंसे सर्वसम्मतिसे युवा रामसिंह ही इस कार्यके लिए चुना गया। यह वही वीरश्रेष्ठ था जो थोड़ेसे राजपूत वीरोंके साथ अभी तक अन्तःपुरकी रक्षा कर रहा था।

महलोंके सामनेवाले मैदानमें आसियुद्ध होना निश्चित हुआ। इस मैदानके एक ओर मुसलमान सेनाके कुछ सैनिक और दूसरी ओर राजपूत लोग खड़े हुए। फतहजंग और रामसिंह अपनी अपनी तलवारें लेकर मैदानमें आ गये। दोनों पुरुष अपनी अपनी सेनाके सर्व-शिरोमणि वीर और एक दूसरेके भयानक शत्रु थे। दोनोंका शरीर जालीदार लोहेके कवचसे सुरक्षित था। रामसिंहका शरीर सुगठित और कद कुछ ऊँचा था। उसकी तलवारकी मूठ बहुत सुन्दर भारतीय कारीगरीका नमूना थी। यह हाथमें लेनेमें जैसी घाटदार और मजबूत थी, खुदाई और पच्चीकारीके कारण वैसी ही सुन्दर और कीमती भी थी। रामसिंहका वीर-वेश यूनानके उन पुराने योद्धाओंसे मिलता जुलता मालूम पड़ता था—जिनकी पाषाणमूर्तियाँ वहाँके अजायबघरोंमें देखी जाती हैं। सारांश, रामसिंह देखनेमें बहुत ही सुन्दर और वीरोचित तेजसे सुशो-भित हो रहा था। फतहजंगका वेष भी अपने प्रतिपक्षीके वीरके मुकाबले

जैसा होना चाहिए वैसा ही था। यद्यपि उसकी अवस्था ढल चली थी; परन्तु उसके चेहरेसे उत्साह और फुर्तीलापन झलक रहा था। उसकी तलवार जड़ाऊ तथा नक्काशीके कामवाली न होनेपर भी बहुत तेज और कई अवसरोंपर आजमाई हुई थी।

निदान असियुद्ध प्रारंभ हुआ। रामसिंहने वार करनेके लिए फतहजंगको ललकारा। ऐसे युद्धमें प्रतिपक्षीको प्रथम बार करनेके लिए ललकारना—प्रचारना, प्रचारककी धीर-वीरताका चिह्न है। फतहजंगने अपने शत्रुके आमंत्रणको सादर स्वीकार करके हाथ फेंका। उसका पहला वार इस जोरसे हुआ कि रामसिंहका शिरस्त्राण (लोहेका टोप) जर्जरित हो गया। अब तो दोनों ओरसे वार होने लगे और दोनों ही अपनी अपनी कुशलता और वीरता दिखाने लगे। रामसिंहने लगातार तीन चार हाथ इस सफाईके साथ फैंके कि उनका रोकना शत्रुके लिए कठिन प्रतीत होने लगा। दोनों ही वीर समान बलशाली और असियुद्धमें निपुण थे। चाल बदलते समय फतहजंगका पैर एक पत्थरके चिकने टुकड़ेपर पड़कर फिसल पड़ा और वह जमीनपर गिर गया। जबतक वह पुनः सँभलकर खड़ा नहीं हो गया, तबतक रामसिंह अपनी तलवारकी नोंकको नीचा किये हुए खड़ा रहा। सब लोग उसके इस धर्मयुद्धको देखकर उसकी प्रशंसा करने लगे। कई लोग ऐसे भी थे जो हाथ आये शत्रुको छोड़ देनेके कारण उसकी निन्दा कर रहे थे। शत्रुके अपूर्व रणकौशलको देखकर रामसिंहको विश्वास हो गया कि यदि शत्रु इसी कौशलसे लड़ता रहा, तो मैं अधिक समयतक न टिक सकूँगा। अतएव उत्तेजित होकर वह इस युद्धको शीघ्र समाप्त करनेकी युक्ति ढूँढ़ने लगा। फतहजंगने ज्यों ही तलवारका वार किया, त्यों ही उसने उसे ढालपर ले लिया और इसपर वह इस जोरसे झपटा कि रामसिंहकी ढालकी लोहेकी सलाखा

फतहजंगके कन्धेमें ठठ गई और उसने गहरा घाव कर दिया । परन्तु वह बड़ा साहसी था; उसने सँभल कर इस वार ऐसे जोरसे हाथ मारा कि उससे रामसिंहके माथेमें गहरी चोट पहुँची और वह शीघ्र ही बेसुध होकर जमीनपर गिर पड़ा। अंतमें विजयका यश फतहजंगको ही मिला, उसके कन्धेसे भी रक्तकी धारा बह रही थी और खूनके अधिक निकल जानेसे वह बिलकुल शिथिल और व्याकुल हो गया था।

पाठक, यह जानकर प्रसन्न होंगे कि पूर्व स्वीकृत सन्धिका अक्षरशः पालन किया गया । फतहजंग लूटके मालको लेकर अपने सब साथियों सहित चला गया । राजपूतोंने उनके मार्गमें कोई बाधा न डाली—मार्ग उन्मुक्त कर दिया । वीर रामसिंहके सिरका घाव कुछ दिनोंमें अच्छा हो गया और राजकुमारी कमलावतीका विवाह उसीके साथ हुआ।

